

स्वच्छता का राजमार्ग

अथवा

विचार - शक्ति - चमत्कार •

—दास और रावी

सम्पत्ति का राजमार्ग

अथवा

विचार शक्ति के चमत्कार

लेखक

दास और रावी.

प्रकाशक

साहित्य-स्त-भण्डार, आगरा

प्रकाशक
साहित्य-रत्न-भण्डार,
आगरा

प्रथमावृत्ति

मूल्य

III)

सुदृक्
साहित्य प्रेस, आगरा ।

स्वर्गीय भगत प्रसाद की स्मृति को

पाठकों से



ज्ञात होता है कि आप को किसी वस्तु विशेष की आवश्यकता है और उसकी प्राप्ति के लिए आपके मन में चाह उठती रहती है। ऐसा न होता तो आप इस पुस्तक को मोल लेने और इसे पढ़ने का कष्ट न उठाते। यदि वास्तव में आप के मन में कोई चाह तीव्र है—चाहे धन की प्राप्ति की, चाहे किसी उच्च पद की या आत्म-दर्शन की, चाहे किसी और प्रकार की सम्पत्ति की—तो विश्वास करें, आपका उसकी प्राप्ति का संस्कार उदय हो गया है और इस पुस्तक के अध्ययन से आपकी मनोकामना सिद्ध होने का संयोग जुट गया है। अतएव आप इसे ध्यान देकर विश्वासपूर्वक पढ़ें और लाभ उठायें। संशयात्मक होकर या केवल सरसरी तौर पर पढ़ जाने से ही कुछ फल प्राप्त न होगा और आपका समय व्यर्थ जायगा।

दास--रावी.

प्राक्कथन

लेखक महोदयों ने 'सम्पत्ति का राजमार्ग' शीर्षक पुस्तक के प्राक्कथन के रूप में दो शब्द लिखने का मुझे गौरव प्रदान किया है। मन की चालक शक्ति को सभी ने मुक्त कण्ठ से स्वीकार किया है। वही बन्धन और मोक्ष का कारण होती है और इसीलिए शास्त्र 'मनः पूर्तं समाचरेत' कह कर उसको पवित्र रखने का उपदेश देता है। जिस प्रकार आध्यात्मिक उन्नति के लिए चित्त की वृत्तियों का संयमन आवश्यक माना जाता है, वैसे ही भौतिक उन्नति के लिए भी चित्त की वृत्तियों का संयमन वाञ्छनीय समझा गया है। मनो-विश्लेषण शास्त्रियों (Psycho-Analysists) ने जाग्रत और व्यक्त मन के ऊपरी धरातल की ही खोज नहीं की है वरन् उसको नियन्त्रित करने वाली उपचेतना (Sub-Consciousness) की भीतरी तहों की भी खोज की है। हमारे दैनिक जीवन की कार्यकारण-शृङ्खला भीतरी तहों में मिलती है। जो बातें हमको आकस्मिक मालूम पड़ती हैं उनकी व्याख्या उपचेतन से ही होती है। जिस प्रकार स्थानीय अधिकारियों के कार्यों की व्याख्या केन्द्रीय सरकार की रीतिनीति से शासित होती है और स्थानीय अधिकारियों के रवैये में परिवर्तन करने के लिए हमको केन्द्रीय-सरकार को प्रभावित करने की आवश्यकता पड़ती है उसी प्रकार व्यक्त मन के रङ्गमञ्च पर आने वाली घटनाओं की गतिविधि को नियन्त्रित करने के लिए हमको उपचेतना को, जिसको लेखकों मनाकाश कहा है, प्रभावित करने की आवश्यकता होती है। जिस प्रकार भौतिक वस्तुओं की स्थिति आकाश में रहती है उसी प्रकार मानसिक घटनाओं की स्थिति भी मनाकाश में रहती है और उसी के द्वारा एक मन द्वारा दूसरे मन के प्रभावित होने की सम्भावना रहती है।

लेखक महोदयों ने बड़ी सरल भाषा में यह दिखलाने की कोशिश की है कि हम अपने दैनिक जीवन की सफलता के लिए मनाकाश को किस प्रकार प्रभावित कर सकते हैं। लेखक महोदयों ने विज्ञापनों की सफलता का भी यही रहस्य बतलाया है कि वे अपनी बार-बार की पुनरावृत्तियों द्वारा इस मनाकाश को प्रभावित करते हैं। मन्त्र और जादू दोनों में भी यही तत्व काम करता है। जिस प्रकार हम दूसरों को संकेतों द्वारा प्रभावित कर सकते हैं उसी प्रकार हम अपनी उन्नति के लिए आत्म-संकेतों द्वारा अपने को प्रभावित कर सकते हैं।

मनोविज्ञान एक विज्ञान है। भौतिक शक्तियों का अध्ययन कर हम जिस प्रकार उन शक्तियों का अपने हित के लिए प्रयोग करते हैं, उसी प्रकार हम मन के नियमों का वैज्ञानिक अध्ययन कर के उनका अपने लाभ के लिए प्रयोग कर सकते हैं। चाह की प्रबलता, कल्पना और एकाग्रता कार्यसिद्धि के सोपान हैं। इस पुस्तक में जो कार्यसिद्धि का सस्ता नुसखा ढूँढना चाहें उनको निराश होना पड़ेगा। हर एक वस्तु का मूल्य है। मूल्य चुकाए बिना कोई चीज मुफ्त नहीं मिलती। साधना ही इसका मूल्य है। साधना ही सफलता की कुञ्जी है।

अमरीका में इस तरह का साहित्य प्रचुरता से उत्पन्न हो रहा है। हिन्दी में इस प्रकार के साहित्य की बहुत कमी है। इस तरह के साहित्य को गुप्त रख कर बहुत से लोग ठग-विद्या भी करते हैं और मन चाहे दाम वसूल करते हैं। हमका हर्ष है कि लेखकों ने सफलता के इस रहस्य को खुले खजाने के रूप में दिया है। ये सिद्धान्त तो प्राचीन और व्यापक हैं, इन से लाभ उठाना साधकों का काम है। यद्यपि लोगों का कहना है कि मनोरथ प्रायः सिद्ध नहीं हुआ करते हैं तथापि यह बात केवल आलसियों के लिए ही सत्य है। आशा है कि यह पुस्तक हिन्दी पाठकों का मानसिक शैथिल्य दूर करने में योग देगी।

दिल्ली दरवाजा, आगरा }
६-७-४६

गुलाबराय

विषय सूची

विषय	पृष्ठ
१—सम्पत्ति का अधिकारी कौन है ?	१
२—मन दो हैं	७
३—आत्म-संकेत	१७
४—चाह	२६
५—कल्पना	३६
६—एकाग्रता	४३
७—कार्य-विधान	४७
८—नौकरी	५५
९—आवश्यक सलाह	५८
१०—मानसिक चिकित्सा	६५
११—वक्तृत्व कला	७३
१२—शिक्षण	८१

सम्पत्ति का राजमार्ग

सम्पत्ति का अधिकारी कौन है ?

क्या सम्पत्ति की प्राप्ति के लिए धन की आवश्यकता है ? नहीं। एण्ड्रू कारनेगी, जो संसार के सबसे बड़े धनाढ्यों में माना जाता है और जिसने बीसियों को करोड़-पति बना दिया, प्रारम्भ में एक बहुत ही साधारण स्थिति का व्यक्ति था। एडिसन, जो अपने अनेक आविष्कारों के लिए लोक-प्रसिद्ध है, प्रारम्भ में एक निर्धन व्यक्ति था। ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने, जो भारतवर्ष के शैक्षिक और सामाजिक क्षेत्रों के प्रसिद्ध नेता हुए हैं, एक गरीब घराने में जन्म लिया था।

तब क्या सम्पत्ति की प्राप्ति के लिए विद्या की आवश्यकता है ? विद्या के अभाव में भी बहुत से लोग सम्पन्न हुए हैं। हेनरी फोर्ड को, जो संसार में मोटर के सबसे बड़े कारखाने का मालिक है, हाई स्कूल तक की भी शिक्षा प्राप्त नहीं थी। चार्ल्स ब्रेडला ने, जो इङ्ग्लैण्ड का एक बहुत प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ और संसार का एक विख्यात वक्ता था, एक प्राइमरी स्कूल में केवल ११ वर्ष की अवस्था तक शिक्षा पाई थी और निर्धन होने के कारण बचपन

में उसे एक दफ्तर में चपरासी के तौर पर काम करना पड़ा था ।

उन्नति के शिखर पर पहुँचने वाले व्यक्तियों के सम्बन्ध में देखने में आया है कि धन या विद्या का अभाव और दूसरी प्रतिकूल परिस्थितियाँ उनके रास्ते में विघ्न नहीं डाल सकीं । उन सब में कोई ऐसी शक्ति विद्यमान थी जो उन सब बाधाओं को ठुकरा कर उन्हें आगे बढ़ाती हुई उन्नति के शिखर तक ले गई ।

‘सम्पत्ति’ शब्द हमने इस पुस्तक में अधिक व्यापक अर्थ में प्रयुक्त किया है । जो भी वस्तु किसी को अभीष्ट होती है और बड़े यत्न और परिश्रम से प्राप्त होती है वह उस मनुष्य के लिए भारी दौलत या सम्पत्ति है । किसी को धन की प्रबल इच्छा होती है, किसी को प्रतिष्ठा और ऊँचे पद की, किसी को हुकूमत की, किसी को अपने किसी विशेष प्रियजन को प्रसन्न करने की, किसी को अपने मित्रों और सम्बन्धियों में पारस्परिक प्रेम और शान्ति बनाये रखने की और किसी को मन की शान्ति या अपने इष्टदेव के दर्शन की । जो सिद्धान्त इस पुस्तक में प्रस्तुत किया गया है वह इन सब प्रकार की सम्पत्तियों की प्राप्ति में एक-सा लागू है ।

नेपोलियन हिल ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक थिङ्क ऐण्ड ग्रो रिच (Think And Grow Rich) में अमरीका के लगभग ५० बड़े-बड़े व्यक्तियों के नाम देकर लिखा है कि ये अमरीका के लोक-प्रसिद्ध पुरुषों में से कुछ एक के ही नाम हैं, जो आर्थिक या किसी अन्य क्षेत्र में सम्पन्न या समृद्ध हुए हैं, और यह सिद्ध किया है कि जो लोग कारनेगी के बतलाये हुए रहस्य को समझ

कर उसके अनुसार चले हैं वे जीवन में बहुत उन्नति कर गये हैं। उक्त लेखक का कथन है कि उसे एक भी ऐसे व्यक्तिका उदाहरण नहीं मिला जिसने कारनेगी के नियमों का पालन किया हो और अपने जीवन के कार्य-क्षेत्र में विशेष उन्नति न की हो; और न उसे कोई ऐसा ही व्यक्ति मिला है जो इन नियमों पर चले बिना किसी ऊँची स्थिति तक पहुँचा हो या अधिक समृद्ध हुआ हो। इन दो बातों से उसने यह परिणाम निकाला है कि जीवन में समृद्धि प्राप्त करने के लिए इस रहस्य का ज्ञान स्कूलों-कालेजों में दी जाने वाली साधारण शिक्षा की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है।

इस पुस्तक के अगले अध्यायों में उन्नति के इसी रहस्य पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है, जिससे सर्व साधारण उसे सुगमतापूर्वक समझ सकें और अपने जीवन में उसका उपयोग करके सफल हो सकें। यहाँ पर इतना कह देना ही काफी है कि जिन-जिन व्यक्तियों ने किसी भी क्षेत्र में उन्नति प्राप्त की है उनके जीवन का निरीक्षण करने से यह पता चल जाता है कि उनमें से प्रत्येक ने यह स्पष्ट रूप में निश्चय कर लिया था कि उसका अभीष्ट क्या है, और उसकी प्राप्ति के लिए उसके हृदय में गहरी लगन और दृढ़ संकल्प मौजूद था। समृद्धि और सफलता के लिए सच्ची और गहरी चाह सबसे पहली आवश्यकता है। यह 'चाह' ही मनुष्य को उन्नति के मार्ग पर चलाने वाली शक्ति है। यदि किसी के हृदय में उन्नति की चाह ही नहीं है और वह जिस दशा में है उसी में सन्तुष्ट है, तो उसके

लिए निश्चय ही उन्नति के द्वार बन्द हैं और इस पुस्तक का पढ़ना उसके लिए व्यर्थ है। प्रत्येक प्रकार की सफलता नियमानुसार ही प्राप्त होती है, अकस्मात् आप से आप प्राप्त नहीं हुआ करती। प्रकृति की कोई घटना अकारण नहीं होती। अगर पहाड़ पर से कोई चट्टान अचानक लुढ़क पड़ती है तो यह भी किसी न किसी प्राकृतिक शक्ति की कार्रवाई का परिणाम होता है। यदि किसी को इस नियम का पता लग जाय तो वह अपने आप को जैसा चाहे बना सकता है। आपको ज्ञात होना चाहिए कि आप शरीर नहीं हैं, आपका असली रूप आपके विचार और आपकी आत्मा है। आपके विचार दिखाई नहीं देते, लेकिन उनमें एक बलवती शक्ति विद्यमान होती है और यह शक्ति शरीर से अलग अपना काम करती है। चाहे आप सोते हों चाहे जागते हों, यह शक्ति आपसे दूर फासले पर जाकर दूसरे व्यक्तियों को प्रभावित कर सकती है।

पापुलर सायंस सिफ्टिंग्स (Popular Science Siftings) में एक लेख था कि एक व्यक्ति जार्ज मूलर ने जो ब्रिस्टल नगर इंग्लैंड का रहने वाला था, बहुत दिनों तक बड़े अनाथालय जारी रखे और असंख्य अनार्थों और असहायों का पालन पोषण करता रहा। परन्तु इस पुण्य कार्य के लिए उसने प्रार्थना को ही अपना एकमात्र सहारा बना रखा था और प्रण कर लिया था कि किसी मनुष्य से वह कभी कुछ न मांगेगा। उसने इस काम के लिए करोड़ों रुपया एकत्र किया,

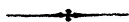
परन्तु किसी मनुष्य से कभी कुछ नहीं माँगा। जब उसे रुपये की आवश्यकता होती थी तो केवल ईश्वर से प्रार्थना करता और आश्चर्यजनक रीति से, संसार के विभिन्न स्थलों से धन और सामग्री अन्धाधुन्ध चली आती थी। जो लोग जार्जमूलर के पास रुपया भेजते थे वे इस बात का समर्थन करते थे कि उनके हृदय में अनायास ही एक विचित्र प्रेरणा उत्पन्न होती थी—किसी किसी को सोते समय और किसी-किसी को अपनी पूजा के समय—और यह प्रेरणा उन्हें इतना विकल कर देती थी कि जब तक वे उसके पास रुपया भेज न देते थे, उन्हें चैन नहीं आता था।

इससे स्पष्ट हो जाता है कि मनुष्य के हृदय से जो विचार-धाराएँ उत्पन्न होती हैं, वे बेतार के तार की खबरों के समान दूसरे प्राकृतिक तारधर अर्थात् मनुष्य के मस्तिष्क में पहुँच कर प्रभाव डाल सकती हैं। जार्ज मूलर के बहुत दिनों के लगातार अनुभवों से एक परिणाम यह भी निकलता है कि वास्तव में रचना में कोई ऐसा प्राकृतिक चैतन्य विश्वव्यापी तारधर मौजूद है जिसमें सच्ची प्रार्थना की लहरें पहुँच सकती हैं और जो उनको ग्रहण करके, यथोचित दिशा में प्रवाहित करके, प्रार्थना का उद्देश्य पूरा करा सकता है।

यदि इस प्रबल शक्ति—विचारशक्ति—के नियमों का पता चल जाय तो आप अपने कार्य में बहुत शीघ्र सफलता प्राप्त कर सकते हैं। आपका मन चुम्बक के समान है। उसमें

विचारों को आकर्षित करने और फिर उनको बाहर प्रवाहित करने की शक्ति भरी हुई है।

आपको अगले अध्यायों में बतलाया जायगा कि यह शक्ति किस प्रकार बढ़ाई जा सकती है। आपको यह भी ज्ञात हो जायगा कि आप अपने विचारों को स्वयं उत्पन्न नहीं किया करते, आपको उनका पता तब चलता है जब वे आपके मनमें आकर उपस्थित हो जाते हैं।



मन दो हैं

पिछले अध्याय में जिस रहस्य की ओर इशारा किया गया है, वह केवल ऐण्डू कारनेगी के ही हाथ नहीं लगा। उसके पहले भी बहुत से बड़े बड़े आदमी हो चुके हैं और उन सब की उन्नति का कारण यही रहस्य था, परन्तु इस शताब्दी में नवीन मनो-विज्ञान ने इस रहस्य को एक व्यावहारिक सिद्धान्त का रूप दे दिया है। वास्तव में यह रहस्य कोई गुप्त रहस्य नहीं है। जिस कार्य प्रणाली को अपना कर कारनेगी और दूसरे प्रसिद्ध पुरुष उन्नति के शिखर पर पहुँचे उसका आधार मनोविज्ञान ही है और प्रत्येक व्यक्ति इसी कार्यप्रणाली द्वारा उन्नति के मार्ग पर आरूढ़ होता है। यह हो सकता है कि किसीको यह पता न हो कि वह मनोविज्ञान के एक महान् नियम का उपयोग कर रहा है। इस रहस्य के प्रत्येक पहलू पर प्रकाश डालने से पहले यह उचित जान पड़ता है कि मनोविज्ञान के उस सिद्धान्त का संक्षेप में वर्णन किया जाय जिसकी आधार-शिला पर ये नियम स्थित हैं। नये मनोविज्ञान के अनुसार मन दो हैं—एक चेतन अर्थात् जाग्रत अवस्था का मन और दूसरा उपचेतन मन अर्थात् मनाकाश। जिस प्रकार हर भौतिक शक्ति के दो रूप होते हैं, एक प्रकट और दूसरा गुप्त, इसी प्रकार मानसिक शक्ति के भी दो रूप या घाट अथवा धरा-

तल हैं। चेतन मन के घाट पर विचार भावना और संकल्प की क्रियाएँ होती हैं, और मनाकाश में जो क्रियाएँ होती हैं वे गुप्त रूप में होती हैं, अर्थात् उनका ज्ञान साधारणतया मनुष्य को नहीं होता। भारतीय दर्शन के अनुसार उस मानसिक शक्ति के प्रकट रूप को मन अथवा अन्तःकरण कहते हैं और उसके गुप्त रूप को मनाकाश, उपचेतना या उपचेतन मन कहते हैं। जिस प्रकार हमारी स्थूल पृथ्वी का एक आकाश है, उसी प्रकार हमारे मन का भी एक आकाश है और जिस प्रकार पृथ्वी की सारी स्थूल वस्तुएँ इस स्थूल आकाश के मसाले से बनी हैं उसी प्रकार मन की सब क्रियाओं का हेतु मनाकाश का चेतन तत्व है। जैसे स्थूल आकाश के विस्तार की तुलना में हमारी पृथ्वी बहुत छोटी है, उसी प्रकार मनाकाश की व्यापकता की तुलना में हमारा जाग्रत अवस्था का मन बहुत ही सीमित है। तात्पर्य यह कि हमारे जाग्रत अवस्था के मन में जो क्रिया होती है उससे कहीं अधिक मानसिक कार्यवाही मनाकाश में गुप्त रूप से होती रहती है, जिसका हमें कुछ पता नहीं चलता। प्रसिद्ध दार्शनिक हैलक का कथन है—यह परमात्मा के प्रबन्ध की बड़ी खूबी है कि किसी एक समय में हमें अपनी कुल मानसिक क्रियाओं के केवल एक बहुत छोटे से भाग का ही ज्ञान होता है; क्योंकि जब हम किसी काम में ध्यान जमाये हुए होते हैं, मसलन् कोई समस्या हल कर रहे होते हैं, किसी कविता को याद कर रहे होते हैं या किसी बहुत छोटी सी चीज को अनुवीक्षण यंत्र से देख रहे होते हैं तो उस समय अगर

विज्ञान, इतिहास, भूगोल, अपने व्यवसाय आदि के सम्बन्ध में हमारी जानकारी के हमारे मनाकाश पर पड़े हुए सब संस्कार या अङ्कन हमको याद बने रहें तो कितनी बड़ी उलझन पैदा हो जाय।

पश्चिम में वहाँ के प्रसिद्ध दार्शनिक लिबनिज ने पहले पहल इस सिद्धान्त का महत्व स्वीकार किया; और इस शताब्दी में इस सम्बन्ध में महत्वपूर्ण खोजें की जा रही हैं; परन्तु भारतीय दार्शनिक बहुत पहले से ही इसे मानते चले आ रहे हैं। चूँकि पाश्चात्य विद्वानों की प्रवृत्ति प्रत्येक नई खोज को अपने लौकिक उपयोग में लाने की है, इसलिए उन्होंने मनाकाश की प्रबल शक्ति से भी भौतिक लाभ उठाने के लिए उसका विशेष रूप में अनुसन्धान किया है और उसके आधार पर बहुत से उपयोगी नियम निर्धारित कर रहे हैं। मनाकाश की शक्ति के सम्बन्ध में 'अमृत बचन' नामक ग्रन्थ में लिखा है—

“गिर्द व पेश के सब सामान का असर ज्ञानेन्द्रियों पर पड़ता है और इस तरीके से जो नक्श ज्ञानेन्द्रियाँ लेती हैं उनका जीव को उस वक्त ज्ञान हो जाता है, लेकिन मुआमला इतने ही पर ख़त्म नहीं होजाता। ये सब नक्श हमारे अन्दर किसी जगह पर कायम रहते हैं और इनमें से ख़फीफ़ से ख़फीफ़ और कम-जोर से कमजोर नक्श भी हमारी अन्दरूनी तख्ती पर लिख जाता है। अबरक़ाम्बी ने अपने रिसाले के अन्दर, जो उसने दिमाग की शक्तियों के मजमून पर लिखा है, जो वाक़यात कलमबन्द किये हैं उनसे हमारे इस बयान की तसदीक पूरे तौर

पर हो जाती है। उसने बयान किया है कि कई एक औरतों और मर्दों को गैर जवान की नज्में जो उन्होंने कभी इत्तिफाक से सुन ली थीं, एक अर्से के बाद याद आ गई और उन्होंने उन नज्मों को ठीक ठीक दोहरा दिया। चूँकि नज्मों के अर्थ न जानने से उनकी निहायत ही खफीफ तवज्जह उनके सुनने में लगी होगी, इसलिए जाहिर है कि नज्मों के संस्कार, जो उनके अन्दर पड़े, वे भी निहायत कमजोर होंगे। लेकिन हिजयान (सन्निपात) की वजह से गैरमामूली हलचल की हालत पैदा होने पर ज्योंही वे संस्कार उनकी तवज्जह के सामने आये, उनको फौरन नज्मों की याद आ गई और उन संस्कारों की मदद से उन्होंने सब नज्में दोहरा दीं। वह मसाला या पर्दा, जिस पर ज्ञानेन्द्रियों और नीज मानसिक क्रियाओं के द्वारा संस्कार या नक्श पड़ते हैं और कायम रहते हैं, आकाश है।

मन-आकाश

“वह आकाश तत्व जिस पर ये नक्श जीव के अंदर पड़ते हैं, मन-आकाश कहलाता है। इस आकाश में हृद् दर्जे का लचीलापन है जो बाहरी सृष्टि के आकाश-तत्व के लचीलेपन से मुशाबह है। इस लचीलेपन के जरिए ही अन्दर के मन-आकाश और बाहर के आकाश-तत्व पर पड़े हुए नक्श अपने ठिकानों पर पहुँचा करते हैं। बाहरी आकाश-तत्व की मारफत जिस ठिकाने पर नक्श पहुँचते हैं वह अक्स फेंकने वाला है; और मन-आकाश के ठिकाने के अन्दर भी अगर्चे यह गुण मौजूद है लेकिन वह अन्तरी

यानी मानसिक है। जिस वक्त मन-आकाश पर कोई नक्श पड़ते हैं तो उस वक्त मन और उसके चारों अंगों (मनन, चिन्तन, बोध और अहंकार) को उनका ज्ञान रहता है, लेकिन तबज्जह के उनसे हट कर दूसरे नक्शों और दूसरी तरफों में चले जाने से पहले नक्शों का ज्ञान मन्द पड़ जाता है और रफ़्ता रफ़्ता उनकी याद बिल्कुल जाती रहती है। लेकिन याद के जाते रहने पर वे नक्श हट नहीं जाते बल्कि बरखिलाफ़ इसके मनाकाश के दफ़्तर में बतौर पुरानी मिस्त्रों के निहायत एहतियात से रक्खे रहते हैं और जब कभी—चाहे जान बूझ कर या अनायास—हम उनकी जानिब तबज्जह देते हैं तो तबज्जह के पूरी तौर से उनकी जानिब मुखातिब होने पर, जैसा कि ऊपर बयान हुआ, वे फौरन दोबारा प्रकट होकर याद आ जाते हैं।

नक्श कैसे दोबारा प्रकट होते हैं

“अबरक्राम्बी के बयानकर्दा वाकयात से, जिनका ऊपर जिक्र हुआ, दो उसूल साफ़ तौर पर कायम होते हैं। एक तो यह कि जब किसी की तबज्जह का उसके अन्दर पड़े हुए नक्शों के साथ पूरे तौर से सम्बन्ध होता है तो वह उन नक्शों के अनुसार ही बरतने लगता है, चाहे वे नक्श निहायत ही कमजोर क्यों न हों और उनका मतलब भी उसकी समझ में न आया हो; और दूसरा यह कि उन नक्शों की वजह से जो क्रियाएँ जीव करता है उनका मन-आकाश पर फिर असर पड़ता है और मुनासिब संयोग मिलने पर यानी तबज्जह का उनके साथ पूरा तअल्लुक

कायम होने पर वे नक्श जीव से नये कर्म करा सकते हैं ।”

हमारे मन की कार्यवाही जाग्रत अवस्था के मन के बाहर यानी मनाकाश में कितनी हो रही है, हमें इसका अनुमान ही नहीं । उसे ऐसे समझा जाय कि जिस तरह दूरबीन के द्वारा हमें केवल आकाश के एक छोटे से हिस्से का ज्ञान मिलता है, शेष निस्सीम आकाश दूरबीन के क्षेत्र से बाहर ही रहता है, इसी प्रकार हमारे मनाकाश की कार्यवाही हमारे जाग्रत अवस्था के मन के ज्ञान से बाहर ही रहती है ।

आइसबर्ग (समुद्र में तैरने वाला बरफ का पहाड़) का एक छोटा सा भाग समुद्र में पानी के ऊपर दीख पड़ता है और उसका बहुत बड़ा अर्थात् $\frac{9}{10}$ भाग पानी के नीचे छिपा रहता है । इसी प्रकार हमारे सम्पूर्ण मन का बहुत बड़ा भाग जिसे उपचेतना कहते हैं गुप्त रूप से अपनी क्रियाएं करता रहता है । प्रथक्कृत रश्मिवर्ण (Spectrum) की मिसाल से चेतन और उपचेतन मन की पारस्परिक तुलना और भी स्पष्ट हो जाती है । जब प्रिज्म (Prism) अर्थात् फ़ानूसी शीशे के द्वारा हम सूर्य की किरणों को विभिन्न रंगों में बाँट देते हैं तो जो सात रंग की पट्टी दीख पड़ती है उसे स्पेक्ट्रम कहते हैं । स्पष्ट है कि यह सूर्य की असंख्य प्रकाशमयी किरणों के सामने कुछ भी हैसियत नहीं रखता और यदि सूर्य की अगणित प्राकाशहीन किरणों का भी, जिनसे पृथ्वी पर गर्मी पहुँचती है और वनस्पतियों में रासायनिक क्रिया होती है, लेखा किया जाय तो इस स्पेक्ट्रम की तुच्छता और भी अधिक स्पष्ट

हो जाती है। हमारे मनाकाश की यदि सूर्य के अनन्त किरण-समूह से तुलना की जाय तो हमारे जाग्रत अवस्था के मन को इस तुच्छ स्पेक्ट्रम से बढ़कर हैसियत नहीं रहती।

दूसरी बात यह ज्ञात होती है कि ज्ञानेन्द्रियों द्वारा जो ज्ञान हमें प्राप्त होता है उसे हमारा जाग्रत अवस्था का मन उपयोग में लाता है और उपयोग में आचुकने के बाद वह ज्ञान हमारे मनाकाश के भंडार में संगृहीत होजाता है और वहाँ गुप्त चित्र या संस्कार के रूप में असंख्य अन्य पड़े हुए संस्कारों के साथ विद्यमान रहता है। ये ही संस्कार फिर किसी उचित अवसर पर विचार, स्मृति, भावना, सहजवृत्ति, स्फुरणा, या सहज ज्ञान आदि के रूप में प्रकट हो जाते हैं।

‘सत्संग के उपदेश’ नामक पुस्तक में एक बहुत अच्छा उदाहरण दिया हुआ है, जिससे मनाकाश की कार्यवाही भली भाँति समझ में आजाती है। उसमें लिखा है—

“मान लो आप का किसी मित्र के यहाँ जाने का अवसर होता है। वह मित्र आपका आदर पूर्वक स्वागत करता है और आपके खाने के लिए बढ़िया मीठे आम पेश करता है। आप सहज-स्वभाव आम खाने लगते हैं। आम की फाँक गले से उतरते ही सहज-स्वभाव आप कहते हैं, वाहवा ! केसा अच्छा आम है। जिस समय ये शब्द आपके मुँह से निकलते हैं आपका मित्र प्रशंसा के बचन सुन कर प्रसन्न होता है, लेकिन आपके मन के अन्तर के अन्तर (मनाकाश में) आम के स्वाद के

भोग का बीज अज्ञात रूप में जम जाता है। दावत खत्म हो जाती है और आप कुछ देर बाद अपने मकान पर लौट आते हैं और कहने के लिए बात खत्म होजाती है। मगर नहीं, वह आशा का बीज, जो आपके मन के भीतर (मनाकाश में) घुस गया है, मौका पाकर अंकुर लाता है। दस-बीस दिन के बाद उसी प्रकार के आम मिलने की इच्छा आपके दिल में बार बार उठती है और उसे पूरा करने के लिए आप अनेक उपाय करते हैं। आखिरकार आपको आम प्राप्त होजाते हैं। आप आम खाकर अपनी चाह पूरी कर लेते हैं और देखने में अब झगड़ा मिट गया। मगर नहीं, चाह पूरी होने के साथ साथ आपकी आम के स्वाद के भोग की आशा और भी दृढ़ हो जाती है। आशा के दृढ़ हो जाने पर आप की चाह और भी प्रबल हो जाती है और अब उसका रोकना या दबाना और भी कठिन हो जाता है।”

इस उदाहरण से स्पष्ट हो जाता है कि मनाकाश का किस प्रकार हमारे जाग्रत अवस्था के मन पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

मन और ज्ञानेन्द्रियों के द्वार से भिन्न कोई भी मार्ग इन संस्कारों के मनाकाश में पहुँचने का नहीं है और न मनाकाश ही इस प्रकार के कोई संस्कार अपने आप उत्पन्न कर सकता है। हमारे पूर्व जन्मों के तथा पूर्वजों के विचारों, भावनाओं, अनुभवों आदि के संस्कार भी हमारे मनाकाश में मौजूद रहते हैं और

उनके अनुसार ही हमें जन्म से स्वभाव, रुचियाँ और प्रवृत्तियाँ प्राप्त हो जाती हैं और ये ही हमारे व्यक्तित्व की आधार-शिला बनती हैं।

ऊपर के कथन से यह प्रतीत हो सकता है कि हम अपने मनाकाश के अधीन हैं। जो विचार और भाव मन में उठते हैं या जो स्वभाव जन्म से हमें मिला हुआ है या मनाकाश से समय-समय पर स्फुरणा के रूप में जो संस्कार हमारे हृदय में उत्पन्न होते रहते हैं, उन्हीं से प्रेरित हो कर हम अपनी सब क्रियाएँ करते हैं। हमारा जाग्रत अवस्था का मन मानो कठपुतली के खेल का मञ्च है। हमारे विचार, भावनाएँ, दुःख और सुख की दशाएँ कठपुतलियों के समान हैं, जो नाच रही हैं। लेकिन उनका तार, जिसके सहारे वे नाचती हैं, किसी दूसरे के हाथ में है, जो मञ्च के बाहर है। यह हमारा मनाकाश है। इसमें पड़े हुए संस्कारों ही के कारण हमारे मन की दशा बदलती रहती है। हमारे मन की दशाएँ मनाकाश के विलकुल अधीन हैं। हम विवश हैं। स्वयं कुछ नहीं कर सकते। हमारे संस्कार जैसे होते हैं, हम वैसे ही बन जाते हैं। लेकिन मनाकाश के सम्बन्ध में जो खोजें अब हुई हैं उनसे मालूम होता है कि मनुष्य उतना विवश नहीं है। वह अपनी मानसिक क्रियाओं पर अधिकार रख सकता है। उसमें यह शक्ति विद्यमान है कि जैसा चाहे विचार करे, जैसी चाहे भावनाएँ अपने मन में उत्पन्न करे और जो चाहे क्रिया करे। कहने का अभिप्राय यह है कि यदि मनुष्य

चाहे तो मन का अनुचर होने के बदले उसका स्वामी हो सकता है। जिसको अपनी उन्नति की तीव्र इच्छा है, उसके लिए यह एक उत्साह-वर्द्धक और सुखद-सन्देश है। ऐसा मनुष्य किस प्रकार इस शक्ति को जाग्रत कर सकता है, इसका विस्तृत वर्णन अगले अध्यायों में किया गया है।

आत्म-संकेत

पिछले अध्याय में कहा जा चुका है कि मनाकाश एक विशाल भण्डार है जिसमें ज्ञानेन्द्रियों द्वारा हमारे मन पर पड़े हुए संस्कार मन की क्रिया समाप्त हो जाने के बाद प्रविष्ट हो कर संगृहीत हो जाते हैं। यहाँ पर यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि मनाकाश का भण्डार चेतन है, जड़ नहीं। वह प्रति क्षण गुप्त रूप से अपनी क्रियाएँ करता रहता है और जब-तब अनुकूल दशा उत्पन्न होने पर अपने भीतर पड़े हुए संस्कारों को हमारे जाग्रत अवस्था के मन में प्रकट कर देता है। स्मृति क्या है ? मनाकाश के भीतर पड़े हुए संस्कारों का जाग्रत अवस्था के मन में दोबारा आना ही तो है। और बहुधा यह देखा जाता है कि हम किसी समस्या पर घण्टों सोच-विचार करते हैं और समस्या हल नहीं होती। अचानक मन में एक स्फुरणा-सी उठती है जिसके द्वारा वह समस्या सहज में हल हो जाती है। प्रकट है कि यह स्फुरणा जाग्रत अवस्था के मन या बुद्धि की पैदा की हुई नहीं है बल्कि किसी और घाट से स्वयं आकर हमारे मन में प्रकट हो जाती है। होता यह है कि उलझन और चिंता की दशा में जब कभी हमारी चित्त-वृत्ति एकाम्र हो जाती है तो उसका सम्बन्ध मनाकाश से स्थापित हो जाता है और आकर्षण के नियम के अनुसार मनाकाश में से

हमारे मन में एक ऐसी स्फुरणा उत्पन्न हो जाती है जिससे हमारी उलझन दूर हो जाती है और हमारा काम चल निकलता है। एक मनोवैज्ञानिक का कथन है कि मेरा बार-बार का अनुभव है कि जब मैं कोई पुस्तक लिखने बैठता हूँ तो मुझे जान पड़ता है कि मेरे मन-बुद्धि की शक्ति से यह काम बाहर है। मैं केवल इतना करता हूँ कि आवश्यक सामग्री एकत्र कर लेता हूँ और फिर अपना ध्यान पुस्तक लिखने की ओर से बिल्कुल हटा लेता हूँ और अध्ययन या अपने दूसरे कामों में लग जाता हूँ। किसी विशेष समय पर जब मेरे मन में तीव्र भाव के कम्पन उत्पन्न होकर मेरी चित्त-वृत्ति को एकाग्र कर देते हैं, तब मुझे तुरन्त ही सूझ जाता है कि लेख की सामग्री को अमुक क्रम में रखना चाहिए और मैं पुस्तक लिखना प्रारम्भ कर देता हूँ।

अधिकांश प्रसिद्ध और सिद्धहस्त लेखकों ने अपना यही अनुभव बतलाया है। एक रसायनवेत्ता, जिसने कई एक उपयोगी खोजें कीं, लिखता है कि मैंने अपनी खोजों के सम्बन्ध में जो प्रयोग किये वे मेरी मन-बुद्धि की प्रेरणा से नहीं हुए, बल्कि मुझे अनायास सूझ जाया करते थे। इससे प्रकट होता है कि बड़े बड़े काम हमारे मन और बुद्धि मनाकाश की सहायता के बिना नहीं कर सकते। प्रसिद्ध लेखक, चित्रकार, कवि, गायक और राज-नीतिज्ञ अपना अनुभव बतलाते हैं कि उनको काम की बात अनायास ही सूझ जाती है। साधारण बुद्धि की युक्तियाँ और समझबूझ कुछ काम नहीं करती।

तब क्या हम अपने मनाकाश के बिलकुल अधीन हैं ? नहीं, ऐसा नहीं है । यद्यपि मनाकाश पर हमारा पूरा अधिकार नहीं हो सकता, फिर भी हमें यह शक्ति प्राप्त है कि अपने मतलब के विचार मन में उत्पन्न करके उनके संस्कार मनाकाश में प्रविष्ट कर सकते हैं । हमारे मन में प्रति दिन भौंति भौंति के विचार—लाभदायक और हानिकारक, दोनों—उठते रहते हैं और इन सब के संस्कार मनाकाश में प्रविष्ट होते रहते हैं ।

आम तौर पर लोग अपने विचारों और भावों के बंधुए हो जाते हैं । पैतृक रुचियों, आदतों और दूसरों के मानसिक आदेशों अथवा संकेतों का उन पर शासन रहता है । जो भावना किसी समय उनके मन में उत्पन्न होती है, उसी में बहते रहते हैं और उनके मन में यह विचार नहीं उठता कि उनमें अपने विचारों या भावों को दबाने या उनका रुख बदलने की शक्ति मौजूद है । वे समझते हैं कि जैसी प्रकृति उनकी है वे वास्तव में वैसे ही हैं और यह नहीं सोचते कि जैसी प्रकृति वे अपनी बनाना चाहें, बना सकते हैं । लेकिन सच बात यह है कि जब तक वे अपने मन पर अधिकार प्राप्त नहीं करते तब तक वे वास्तव में स्वतन्त्र नहीं हैं । स्वतन्त्रता पूर्वक काम करने की शक्ति प्राप्त हो जाने पर मनुष्य को एक नया ही अनुभव प्राप्त होता है । यह शक्ति अभ्यास से प्राप्त हो सकती है । सभी बातों को सीखने के लिए अभ्यास की आवश्यकता होती है । यह अभ्यास एक बहुमूल्य वस्तु है और पराधीनता के बन्धनों से छुड़ा कर आपको

स्वार्थी बना सकता है । नवीन मनोविज्ञान के अनुसार आपका वर्तमान स्वभाव उन संस्कारों का परिणाम है जो आपके मनाकाश में पड़े होते हैं और प्रतिदिन बढ़ते जाते हैं । अगर आपके मन में उनको वश में करने की सच्ची चाह उत्पन्न हो जाय और आप पक्का इरादा कर लें तो मनाकाश पर असर डालने की जो युक्ति इस पुस्तक में बतलाई गई है उसको उपयोग में ला कर आप आसानी से अपने स्वभाव में परिवर्तन उत्पन्न कर सकते हैं और उनके वश में बने रहने के बदले उनसे अपनी इच्छा के अनुसार काम ले सकते हैं ।

हमको यह अधिकार है कि जो विचार हमारे लिए उपयोगी हैं, उन्हीं के संस्कार मनाकाश में जाने दें और व्यर्थ के तथा हानिकर विचारों को मन में न उठने दें जिससे कि उनके संस्कार मनाकाश पर न पड़ने पायें । इसका उपाय क्या है ? मनाकाश का यह एक गुण है कि जो विचार मन में सबसे अधिक प्रबल होता है और जो किसी तीव्र भावना से प्रेरित होता है उसके अंकन को वह बहुत सुगमता-पूर्वक अपने भीतर ले लेता है । यदि किसी विचार के साथ धन की प्राप्ति की तीव्र इच्छा या किसी व्यक्ति के प्रति उमड़ता हुआ प्रेम या भय या और कोई तीव्र भावना मिली हुई है तो ऐसे विचार का अङ्कन मनाकाश में सीधा प्रविष्ट हो जाता है । जब मनुष्य का मन ऐसी किसी भावना में रँगा हुआ होता है तो सहज ही उसका सम्बन्ध मनाकाश से जुड़ जाता है । नवीन मनोविज्ञान का यह एक सिद्धान्त है कि

यदि हम किसी के हृदय पर कोई गहरा प्रभाव डालना चाहें तो यह दलील या बहस करके नहीं हो सकता। इस की रीति यह है कि उसको अपना विचार इस तरह इशारे में सुभाँँ कि उसके हृदय पर उसका प्रभाव पड़े। दलीलों से तो केवल उसकी बुद्धि पर ही प्रभाव पड़ सकता है लेकिन इस प्रकार के इशारों से उसकी भावुकता पर प्रभाव पड़ कर, सीधा जाकर उसके मनाकाश में उसका संस्कार पड़ जाता है। बुद्धि को ऐसे इशारों की जाँच-पड़ताल करने का अवसर नहीं मिलता। बहुधा कपट-व्यापार करने वाले इसी नियम से अनुचित लाभ उठा कर दूसरों को धोखा देते हैं। उदाहरणार्थ देखने में आया है कि सीधे-सादे लोगों में इसी नियम के अनुसार सोना बनाने की चाह उत्पन्न करके ये लोग उन्हें ठग लेते हैं।

जिस मनाकाश में बहुत से छोटे-छोटे और अनावश्यक विचारों के संस्कार भरे होते हैं उसमें उच्च-कोटि के अनुभवों का प्रवेश नहीं हो सकता। जो लोग पुस्तकों में पढ़े हुए दूसरों के विचारों और सिद्धान्तों को बिना अपनी बुद्धि की कसीटी पर कसे हुए स्वीकार कर लेते हैं और इस प्रकार उनके गहरे संस्कार मानसिक संकेत के नियम के अनुसार अपने मनाकाश में पड़ जाने देते हैं उनके मन में निजी अनुभवों के लिए स्थान नहीं रह जाता है। यही कारण है कि जो लोग अपने अनुभवों द्वारा उन्नति के शिखर पर पहुँचे उनकी शिक्षा प्रायः अधिक नहीं थी, उनका मनाकाश दर्पण की भाँँति स्वच्छ था जिससे उनको बात सूझ जाया

करती थी। वे दूसरों के विचारों और उनकी सम्मतियों से अप्रभावित रहते थे।

यही संस्कार जब हमारे मनाकाश से लौट कर हमारे मन में उत्पन्न हो जाते हैं, तब साधारणतया हम लोग समझते हैं कि ये विचार हमारे ही मन की उपज हैं। बचपन से लेकर बराबर हमारे मनाकाश पर इस प्रकार के इशारों या संकेतों के अङ्कन पड़ते रहते हैं और वे हमारे व्यक्तित्व को प्रभावित करते हैं।

एक और नियम यह है कि यदि कोई संकेत बार-बार किया जाय तो उसका असर मनाकाश पर बहुत गहरा पड़ जाता है। कोई बात बार-बार कान में पड़ती रहे या दिखाई जाय तो हम अन्त में उसकी सचाई में विश्वास कर लेते हैं। सौदागर लोग इसी नियम का उपयोग करके तरह-तरह के विज्ञापनों द्वारा जनता के मनाकाश में अपने माल की विशिष्टता के अङ्कन जमा देते हैं और फिर जनता का मन स्वयं ही उसकी विशेषता को स्वीकार करने लगता है। वे अपने विज्ञापनों को ऐसे मनोरंजक रूप में प्रदर्शित करते हैं कि वह जनता के मन को आकर्षित करता है और उनकी भावुकता को प्रभावित करके सीधा मनाकाश में जा पहुँचता है।

जिस प्रकार हम संकेत द्वारा दूसरों के मनाकाश में अङ्कन डाल सकते हैं इसी तरह हम स्वयं भी संकेत द्वारा अपने मनाकाश में जैसे चाहें अङ्कन प्रविष्ट कर सकते हैं। इसे आत्म-संकेत कहते हैं। इसी सिद्धान्त पर मानसिक चिकित्सा और नव

विचार आदि कई विज्ञान स्थिर किये गये हैं। जो विचार मन में उत्पन्न होकर निष्क्रिय वहीं पड़े रहते हैं वे शक्तिहीन होते हैं। परन्तु जब वे ही विचार शब्दों में प्रकट होते हैं तो उनमें एक शक्ति आजाती है। एक विचारक का कथन है कि अगर कोई आज आपसे कुछ माँगने के लिए आने वाला है और आप उससे इनकार करना चाहते हैं तो पहले अपने मन में पक्का इरादा कर लें कि आप जरूर इनकार करेंगे और जब आप इस इरादे को शब्दों में कह डालते हैं—यानी इस तरह कि 'कुछ हो जाय हम जरूर इनकार कर देंगे' तो जान लें कि आपका मन आपसे इस इरादे के विरुद्ध कभी कार्यवाही न करायेगा और अगर कहीं साथ ही साथ अपने इनकार करने की तसवीर को अपनी कल्पना में ले आये तो यह पक्की आत्म-संकेत की कार्यवाही हो जायगी। अधिक उपयोगी यह होता है कि अन्यपुरुष के रूपमें इस प्रकार संकेत दें अर्थात् अपना नाम लेकर इस तरह कहें, 'देखो सोहन, तुमको इस माँग से साफ इनकार कर देना होगा, हमारा यह हुक्म तुमको मानना होगा।' मन्त्रों में शक्ति कहां से आती है? अपने किसी तीव्र विचार, भावना या प्रार्थना को शब्दों में प्रकट करके बार बार दोहराया जाता है, तब उसके अङ्कन मनाकाश पर पड़ जाते हैं और वे ही अङ्कन लौट कर मनुष्य के मन में स्फुरणा के रूपमें उत्पन्न हो जाते हैं और वे इतने शक्तिशाली होते हैं कि आकर्षण के नियम के अनुसार अनुकूल सामग्री एकत्र कर लेते हैं। इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति

अपने मन में बार बार कहता रहे कि हम तबाह हो गये या हम से बड़ा संसार में कोई भाग्यहीन नहीं, तो निश्चित है कि उस व्यक्ति का विनाश समीप है। आत्मसंकेत का यह नियम है कि यदि आपको धन की चाह है तो अपने मन में विचार उत्पन्न करें कि आप धनवान् हो जायें और फिर इस विचार को अपने आपको सम्बोधित करके—अपना नाम लेकर—अपने आपसे स्पष्ट शब्दों में कहें ‘तुम्हें इतना धन प्राप्त करना है और तुमने यह धन प्राप्त कर लिया’

आत्म संकेत के विशारदों का यह अनुभव है कि यदि हमारा विश्वास दृढ़ है और हम अपनी चाह की पूर्ति के लिए मनाकाश को आज्ञा दें कि हमारी चाह उसको अवश्य पूरी करनी होगी या दीनता के साथ प्रार्थना करें तो मनाकाश अवश्य ही हमारे काम के सुगमता-पूर्वक पूरा होने का उपाय सुझा देता है। ऊपरी तौर पर चाहे यह नुस्खा हास्यास्पद हो लेकिन आत्म-संकेत के नियमों की आधार-शिला पर स्थित है और सदैव सफल होता रहा है।

जिस समय तक बिजली की शक्ति के सम्बन्ध में ज्ञात नहीं हुआ था कि उससे क्या क्या काम लिये जा सकते हैं, उस समय यदि आप से कोई कहता कि वह शक्ति आपकी खबर को एक हजार मील की दूरी पर एक मिनट के भीतर पहुँचा सकती है तो आप यह सुनकर हँस देते और इस बात पर कभी विश्वास न

करते । लेकिन आजकल जबकि इस शक्ति का ज्ञान प्राप्त होगया है, हम खबरें भेजते हैं और विश्वास कर लेते हैं कि यह शक्ति अवश्य हमारी खबर ठिकाने पर पहुँचा देगी । इसी प्रकार आत्म-संकेत से कितने बड़े बड़े परिणाम निकल सकते हैं, इसका हमें अभी ज्ञान नहीं है और इसीलिए इस पर हमारा विश्वास नहीं जमता । परीक्षा करने पर ही विश्वास पैदा हो सकता है ।

इसी नियम की सहायता से मानसिक चिकित्सा करने वाले शरीर के रोग दूर कर दिया करते हैं । यह तो बहुत से लोगों का अनुभव है कि सोते समय अपने को सम्बोधित करके यह कहेंगे पर कि हमें अमुक समय पर जगा देना. उनकी निर्दिष्ट समय पर आँख खुल जाती है ।

चाह



चाह ऐसी तीव्र होनी चाहिए कि उसकी लगन मिटने न पाये। जब तक चाह की लौ नहीं भड़कती, संकल्प की भाप नहीं उत्पन्न होसकती। तेज संकल्प तर्भ उत्पन्न होगा जब पहले तेज चाह हो। अगर धन की चाह है तो ऐसी तेज होनी चाहिए कि उसी की धुन सवार रहे। धन से भिन्न और चाहें फीकी पड़ जायं। अगर धन की चाह उठानी है तो दो चार हजार की न ड्ठाये, लाखों की बात करें। ऐसे बहुत-से लोग हैं जिनमें लख-पती और करोड़पती बनने की शक्ति बीजरूप में मौजूद है लेकिन या तो उनको इस शक्ति के जगाने और विकसित करने का अवसर नहीं मिलता या वे स्वयं अपनी वर्तमान दशा में ऐसे संतुष्ट हैं कि उसको विकसित करने की ओर उनका ध्यान ही नहीं जाता। वे कौड़ियों और पैसों में अपना हिसाब किताब करते हैं, रुपयों और अशर्फियों का विचार उनके अनुमान से बाहर है। परिणाम यह है कि छोटे छोटे दूकानदार और खोमचा लगाने वाले रहकर या छोटी-मोटी नौकरी करके वे अपनी सारी उम्र काट देते हैं। जैसा किसी का विचार होता है वैसा ही वह बनने का प्रयत्न करता है और अन्त में वैसा ही बनकर रहता है। पहले अभीष्ट वस्तु की कल्पना करनी होती है तब वह कल्पना वास्तविकता का रूप ग्रहण करती है।

अक्सर लोग यही नहीं जानते कि उन्हें किस वस्तु की चाह है। कभी एक वस्तु की बतलाते हैं कभी दूसरी की। ऐसी डाँवा-डोल चाह से काम नहीं चलता।

कहते हैं कि एस. डी. कालरिज के दिमाग में विचित्र शक्ति थी परन्तु उसके सामने कोई निश्चित उद्देश्य नहीं था। वह बहुचिन्तता के वायुमंडल में रहता था। इसी वायुमंडल ने उसकी शक्ति को खालिया, उसे चूस डाला और उसके जीवन को दुःखमय और असफल बना दिया। उस का जीवन सपनों में बीतता था और कल्पनाओं ने उसकी मृत्यु-शय्या तैयार की थी। रात दिन उसकी नई नई योजनाएं बना करती थीं, रोज ही एक नया निश्चय आकर खड़ा होजाता था। वह कुछ न कुछ करना चाहता था, पर कुछ न कर सका। अंत में एक दिन इस संसार से बिदा होगया। उसके कमरे के कागज पत्रों की खोज करने से पता चला कि दर्शन और मनोविज्ञान पर लगभग चालीस हजार निबन्ध उसने लिखे थे पर सब अधूरे पड़े थे। उसने एक को भी पूरा नहीं किया। एक को शुरू करता कि कुछ देर बाद दूसरे विषय पर लिखने की उसकी इच्छा होती थी। इसी डाँवाडोल मन की स्थिति में वह एकाग्रता की शक्ति का मूल्य न समझ पाया और संसार उसके ज्ञान से लाभ उठाने से वंचित रह गया।

ऐसे डाँवाडोल मनस्थिति वाले लोगों की चाह पूरी होना अनिश्चित ही होता है। चाह बिल्कुल सुनिश्चित होनी

चाहिए, तब उसकी लौ भड़क कर उसकी पूर्ति के लिए संकल्प की भाप पैदा कर सकती है। यह संकल्प की भाप ही चलाने वाली शक्ति है। फिर, जैसा ऊपर कहा गया, चाह तेज होनी चाहिए। केवल विचार एक बेजान-सी वस्तु है। इच्छा काम करने के लिए गुदगुदाती है। इसमें संचालन की शक्ति है गर्मी है। तेज इच्छा हाने पर ही काम करने का इरादा पैदा होता है। लोग आम तौर पर कोई काम करने की तेज इच्छा नहीं करते; वे केवल चाहते हैं कि ऐसा काम होजाय। उनकी इच्छा उनको काम करने के लिए प्रेरित नहीं करती। जैसे किसी बायलर में भाप तो भरी हो लेकिन वह इतनी अधिक न हो कि एंजिन को चला सके, तो ऐसी दशा में चाहिए कि और भाप भरी जाय, तब वह फूटकर निकल भागेगी और एंजिन के पहियों को चला सकेगी। यही हाल इच्छा का है। जब इच्छा प्रबल होती है तो काम करने के लिए इरादा करने को मजबूर कर देती है। ऐसी तेज इच्छा से ही सफलता प्राप्त हो सकती है। अगर आपको किसी वस्तु की प्राप्ति की इच्छा है तो ऐसा न कहें कि उसकी प्राप्ति के लिए प्रयत्न करेंगे और सफलता होती देख पड़ेगी तो प्रयत्न जारी रखेंगे, नहीं तो छोड़ देंगे। इसको तेज चाह नहीं कहते। तेज इच्छा का स्वरूप यह है कि उस इच्छा की पूर्ति का प्रयत्न बराबर करते रहें, जब तक पूर्ण न होजाय पीछे पाँव हटाने का विचार भी उत्पन्न नहो, बल्कि ऐसी दशा पैदा कर लें कि पाँछे पाँव हटाना असंभव हो जाय।

आप पीछे पढ़ आये हैं कि चाह में जब तक कोई भावना सम्मिलित न हो, तब तक उसका गहरा अङ्कन मनाकाश पर नहीं पड़ता। दृढ़ विश्वास भी एक प्रबल भावना है। इसलिए चाह के साथ यह विश्वास अवश्य सम्मिलित होना चाहिए कि हमारी चाह अवश्य पूरी होकर रहेगी। विश्वास में बड़ी शक्ति है। चाह के पूरी होने का विश्वास कथन-मात्र नहीं, बल्कि गहरा और पक्का होना चाहिए।

कथा है कि किसी शहर में पानी न बरसने से अकाल पड़ गया। लोग भूख से तड़पने लगे। सब ने मिल कर वहाँ के पादरी साहब से निवेदन किया कि आप हमारे लिए ईश्वर से प्रार्थना करें कि वर्षा हो। पादरी साहब ने फरमाया कि अगर आप लोगों को पक्का विश्वास है कि मेरी प्रार्थना पर वर्षा हो सकती है तो आप लोग अमुक समय, अमुक स्थान पर जमा हो जायँ, मैं प्रार्थना कर दूंगा। निश्चित समय पर सब लोग एकत्र हो गये। पादरी साहब ने प्लेट-फार्म पर खड़े होकर ऊँचे स्वर में कहा—आप लोगों का विश्वास झूठा है। अगर आपका विश्वास सच्चा होता तो आप सभी अपने-अपने छाते लेकर आते। इस तरह के विश्वास से काम नहीं चल सकता।

अक्सर लोग अपनी कमजोरियों को देख कर यह सोचते हैं कि इतनी बड़ी चाह कैसे पूरी हो सकती है। यह उनकी भूल है। बल्कि इस विश्वास की कमी के कारण वे विश्वास की शक्ति को अपने विरुद्ध उपयोग में लाते हैं। बार-बार ऐसा विचार उठाने

से, कि हमें कैसे सफलता प्राप्त हो सकती है, वे लोग उस शक्ति को असफलता की ओर प्रवृत्त कर देते हैं, जिससे उनकी भारी हानि होती है क्योंकि विश्वास-शक्ति अपना काम किये बिना नहीं रह सकती ।

बोबी का कथन है कि आत्म-विश्वास की कमी ही हमारी बहुत-सी असफलताओं का कारण होती है । शक्ति के विश्वास ही में शक्ति है । वे सबसे कमजोर हैं—चाहे वे कितने ही शक्ति-शाली क्यों न हों—जिन्हें अपने काम तथा अपनी शक्तियों पर विश्वास नहीं है ।

प्रकृति का एक नियम यह भी है कि जैसा आप विचार करेंगे और जिस प्रकार की चाह उठाएँगे, वैसे ही सामान और उसी प्रकार के लोग आपकी ओर आकृष्ट होंगे । या ऐसा हो सकता है कि आप स्वयं ऐसे वातावरण में पहुँच जायँ जहाँ उस चाह की पूर्ति हो सकती हो । चाहे मोहम्मद पहाड़ के पास जाये, चाहे पहाड़ मोहम्मद के पास आये, दोनों का फल एक ही होता है । यह आकर्षण का नियम प्रकृति के दूसरे नियमों के ऊपर है ।

आकर्षण का नियम विचार धाराओं के द्वारा ही अपना काम करता है । जो मन किसी विचार में जोर से प्रकम्पित होता है, उससे विचार धाराएं उठ कर चारों ओर फैल जाती हैं और दूर-दूर तक फैल कर सीधे ऐसे व्यक्ति के मन पर प्रभाव डालती हैं जो थोड़ा बहुत उन्हीं विचारों का होता है और इस तरह दोनों अनायास ही एक दूसरे के सम्पर्क में आ जाते हैं । लोग कहते हैं

कि अमुक व्यक्ति हमें अपने सौभाग्य से मिल गया और उसके द्वारा हमारा काम चल निकला। वास्तव में यह आकर्षण के नियम का चमत्कार है। यह नियम ऐसा ही अटल है जैसे कि अन्य माध्याकर्षण आदि के नियम।

संसार में एक और नियम है कि कोई वस्तु बिना मूल्य प्राप्त नहीं होती। अगर किसी को धन की चाह है तो उसे उसका मूल्य चुकाने को तैयार रहना चाहिए। वह मूल्य यह है कि वह और किसी चाह को प्रबल न होने दे। केवल धन की ही चाह उसकी मन-बुद्धि को प्रेरित करती रहे और वह चाह इतनी तेज हो और उसका मन इस चाह में ऐसा रँग जाय कि वह किसी के कहने-सुनने से या और किसी कारण से मिट न जाय। उस चाही हुई वस्तु की प्राप्ति के लिए उचित यत्न भी करना होगा। और यत्न करते हुए यदि कभी असफलता का मुँह देखना पड़े तब भी अपने निश्चय में दृढ़ रहना होगा और उस चाह को छोड़ न बैठना होगा।

अक्सर ऐसा होता है कि सफलता के पहले निराशा का मुँह देखना पड़ता है। जब ऐसी परिस्थिति हो तो याद रखना चाहिये कि निराशा के पश्चात् ही प्रायः सफलता के सामान जुटने लग जाते हैं, क्योंकि ऐसी दशा में मन में एक विशेष प्रकार का कम्पन पैदा हो जाता है और फिर मनाकाश से स्फुरणा उठ कर ऐसा उपाय सुझा देती है जिससे सहज में काम बनना प्रारम्भ हो जाता है। यदि चाह दृढ़ है तो यत्न करने के सम्बन्ध

में जब कभी असफलता होगी तो मनुष्य उससे निराश होने के बदले अधिक बल लगा कर उसमें तत्पर हो जायगा। किसी मनुष्य की हार नहीं होती, जब तक उसका हृदय हार नहीं मान लेता।

अक्सर लोग इस बात को भूल जाते हैं कि संसार में 'क्षतिपूर्ति' या 'मूल्य चुकाने' का नियम काम करता है। कोई वस्तु बिना मूल्य नहीं मिलती। लोग चाह तो उठाते हैं लेकिन उसका मूल्य चुकाने में हिचकिचाते हैं। जिसको धन की चाह प्रबल है वह उसका मूल्य चुकाने को सदैव तैयार रहेगा। वह अपनी छोटी-मोटी चाहों का इस चाह के लिए त्याग कर देगा। छोटी चाहों के पूरी होने से उसकी तृप्ति कदापि नहीं होगी। जो स्त्री अपना मोटापा दूर करना चाहती है उसको अपने शरीर की फालतू चर्बी एक बोझ जान पड़ती है। उसको इस सम्पत्ति—अपनी इच्छित दशा को—प्राप्त करने के लिए इसका मूल्य चुकाने को तैयार होना चाहिये। मूल्य इसका यह है कि अधिक चिकने-चुपड़े पकवान खाने से परहेज करे। उसको पहले कुछ अपनी ओर से देना होगा, तब कुछ मिलेगा। जो व्यक्ति अपने कारबार की उन्नति चाहता है उसे उसका मूल्य चुकाना होगा। उसे बड़े परिश्रम से तन तोड़ कर ईमानदारी के साथ अपने काम में तत्पर होना होगा। आरामतलबी और सभी ऐसे मनोरंजनों से, जो उसके अभीष्ट की प्राप्ति में बाधक हों, बचना होगा। अगर वह इस मूल्य चुकाने के नियम की उपेक्षा

करता है तब भी उसे कीमत अदा करनी होती है और वह कीमत है—असफलता !

लेकिन जिसने पक्का निश्चय कर लिया है कि उसे किस वस्तु की आवश्यकता है और उसके लिए उसके हृदय में तीव्र चाह भी है और उसे आशा है कि वह वस्तु उसे अवश्य प्राप्त होगी और दृढ़ निश्चय के साथ वह उसकी माँग करता है तो ऐसा व्यक्ति निस्संकोच उसका मूल्य देने के लिये तैयार होगा । वह अपनी अभीष्ट वस्तु का महत्व खूब जानता है और उसको प्राप्त करने के लिए उद्यत है । वह अवश्य मूल्य चुकाने के नियम के अनुसार मूल्य चुकाने के लिये तैयार होगा । उसने भाग्य से बाज़ी लगाई है और जीत कर ही रहेगा । किसी ने सच कहा है कि कल्पना और संकल्प में सफलता का रहस्य छिपा रहता है । कल्पना अभीष्ट वस्तु का मानसिक चित्र बनाती है और संकल्प उसे उसके वास्तविक रूप में लाकर मनुष्य की मनोकामना पूरी कर देता है । लोगों का यह विचार गलत है कि मनुष्य केवल अपने भाग्य से बड़ा आदमी बनता है । नवीन मनोविज्ञान के विद्वानों का मत है कि सफलता के लिए केवल भाग्य पर्याप्त नहीं होता । भाग्य से केवल सफलता का अवसर प्राप्त हो जाता है । उच्चकोटि की सफलता सृष्टि-नियमों के अनुसार अदृश्य शक्ति अर्थात् आकाश तत्व के भण्डार को अपनी सहायक बनाने से प्राप्त होती है, चाहे कोई इसे समझते हुए उपयोग में लाकर उस भंडार की शक्ति को गतिशील करे, चाहे बिना जाने

हुए उससे अनायास ही ऐसी क्रिया बन पड़े जो उस शक्ति को गतिशील करदे। नियम यही है। केवल भाग्य के भरोसे बिना अपने हाथ-पैर मारे कोई ऊँचे पद पर नहीं पहुँचा और न पहुँच सकता है। जो लोग बड़े घरों में उत्पन्न हुए और जिन्हें वहाँ जन्म लेने के कारण ऊँचा पद प्राप्त हो गया उनके हृदय में भी यदि कोई विशेष उन्नति की चाह उत्पन्न होती है तो उनको भी इसी नियम का पालन करना पड़ता है।

मनुष्य को प्रत्येक उचित और वाञ्छनीय वस्तु प्राप्त हो सकती है, यदि—

- (१) उसने अपने मन में ठीक-ठीक निश्चय कर लिया हो कि उसको किस वस्तु की आवश्यकता है।
 - (२) उसके हृदय में उस वस्तु की प्राप्ति की सच्ची और काफी तेज चाह उत्पन्न हो।
 - (३) उसके हृदय में विश्वास जम गया हो कि उसे वह वस्तु अवश्य प्राप्त होगी।
 - (४) उसने दृढ़ निश्चय कर लिया हो कि मैं उसे बिना प्राप्त किये न हटूँगा; और
 - (५) वह उसका मूल्य देने के लिए पूर्णतया तैयार हो।
- यही भाग्य का रहस्य है।

सारांश यह है कि पहले आप अपने मनमें एक निश्चित विचार स्थिर करें कि आपको कौनसी और कितनी वस्तु—उदाहरणार्थ, कितना धन चाहिए। यह कहना काफी नहीं है कि

हमको बहुत धन चाहिए। एक निश्चित रकम की चाह उठायें और फिर समय भी निश्चित कर लें कि कब तक आपके पास उतना धन हो जाना चाहिए। फिर अपने मन में दृढ़ संकल्प करें कि आप उतने धन के लिए क्या मूल्य देने को, अर्थात् क्या कुछ करने को तैयार हैं। इसके बाद जो कुछ कार्य उस धन की प्राप्ति के लिए आपकी समझ में आये उसे तुरन्त ही प्रारम्भ कर दें, चाहे वह अभी आपकी शक्ति से बाहर ही जान पड़ता हो। इन सब बातों को एक जगह लिख लें, यानी यह कि कितना धन चाहिए और कब तक और उसके लिए आप क्या कुछ करेंगे—जैसे आवश्यक पुस्तकों का अध्ययन, जिन लोगों से आपकी कार्य-सिद्धि में सहायता मिल सकती है उनसे परिचय करके उनका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करना, परिश्रम करना और यदि आप नौकर-पेशा हैं तो अपने अफसरों को प्रसन्न रखना आदि-आदि, और इस सबके लिए आपने क्या उपाय सोचे हैं। इस लिखे हुए नोट को सुबह-शाम ध्यानपूर्वक पढ़ लिया करें और पढ़ते समय मन में कल्पना करने का प्रयत्न करें कि वह धन जिसकी आपको चाह है आपको प्राप्त हो गया। अगर चाह तेज है और उसकी प्राप्ति का विश्वास आपके मन में दृढ़ है तो ऐसी कल्पना बन पड़ना कठिन न होगा। उस धन का चित्र आपकी आँखों के सामने हमेशा फिरता रहेगा। नेपोलियन हिल अपनी पुस्तक *Think and Grow Rich* में लिखते हैं कि इसी उपाय का अवलम्बन ऐण्ड्रू कारनेगी ने किया, जो कि

प्रारम्भ में किसी मिल का मामूली मजदूर था और इसी युक्ति का उपयोग करके अन्त में करोड़ों का मालिक बन गया ।

मन की किसी भावना को बार-बार, मनाकाश को सम्बोधित कर के, दोहराने से विश्वास में वृद्धि होती जाती है और मनाकाश अपने नियमानुसार उस चाह की पूर्ति में यथोचित सहायता करता है । जब किसी विचार के साथ कोई भावना सम्मिलित हो जाती है तो उसमें एक ऐसी चुम्बक शक्ति उत्पन्न हो जाती है कि वह मनाकाश के कम्पों में से उसी प्रकार के विचारों को आकर्षित कर लेती है ।

पहले कहा जा चुका है कि आकाश-तत्त्व चेतन है । उसकी शक्ति बराबर कम्पनशील रहती है । ये कम्प हानिकर और लाभदायक दोनों प्रकार के होते हैं—भय, रोग, दरिद्रता, असफलता आदि के और स्वास्थ्य, सफलता, हर्ष और समृद्धि के भी; और आकर्षण के नियम के अनुसार जो प्रबल विचार किसी के मन में उठता है वह आकाश-तत्त्व के भंडार से उसी प्रकार के सैकड़ों कम्प आकृष्ट कर लेता है और इसका परिणाम यह होता है कि उसका वह विचार और भी प्रबल हो जाता है और उसके अनुसार वह मनुष्य कार्य करने के लिए विवश हो जाता है ।

आत्म-संकेत एक ऐसी क्रिया है जिसके द्वारा आप अपने मनाकाश से सीधा सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं और उसमें अपने मतलब के विचार प्रविष्ट कर सकते हैं । अगर आप ऐसा

नहीं करते तो दूसरे प्रकार के हानिकर विचार उसमें प्रविष्ट हो कर वहाँ पनपते रहेंगे ।

जितनी ही आपकी चाह तेज होगी उतनी ही अधिक एकाग्रता आपकी चित्तवृत्ति की उस ओर हो जायगी और उतनी ही अधिक आप आत्म-संकेत की क्रिया में सफलता प्राप्त करेंगे । इसका अभ्यास धीरे-धीरे हो जाता है । जितना धन आपको चाहिए उसका स्पष्ट अनुमान अपने मन में करें । फिर आँखें बन्द करके एकाग्रचित्त होकर उसकी कल्पना करें । यहाँ तक कि आपके सामने उस धन का चित्र खिच जाय । आप ऐसा अनुभव करें कि उस धन की प्राप्ति के लिए जो त्याग, परिश्रम आदि आपने करने का इरादा किया है वह आप कर रहे हैं और धन आपको प्राप्त हो गया है । प्रति-दिन यह साधन करने से आपको चित्त-वृत्ति एकाग्र करने का अभ्यास हो जायगा और आत्म-संकेत की क्रिया आसानी से बन पड़ने लगेगी । मान लीजिये कि आपकी चाह लखपती बनने की है और आप चाहते हैं कि दस बरस में एक लाख की रकम आपको प्राप्त हो जाय तो आपको इस तरह का नोट लिख कर रखना चाहिए—

मुझको आज से दस बरस बाद अमुक साल की अमुक तारीख तक इतना-इतना करके एक लाख रुपया प्राप्त हो जायगा और उसके मूल्य स्वरूप में अमुक-अमुक प्रयत्न पूरे जी-जान से ईमानदारी के साथ करूँगा । मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह धन मुझे अवश्य प्राप्त होगा । मैं इस धन को देख रहा हूँ और जैसे-

जैसे मैं उसकी प्राप्ति के लिए प्रयत्न करता जाऊँगा वैसे ही वह मेरे हाथ में आता जायगा। मुझे ऐसा साधन ज्ञात होना चाहिए जिसके द्वारा यह धन मेरे अधिकार में आजाय और उस साधन के सूझ जाने पर मैं उसके अनुसार कार्यवाही प्रारम्भ कर दूँगा। मुझे दृढ़ विश्वास है कि वह उपाय मुझे अवश्य सूझेगा।

अगर यह आत्म-संकेत की क्रिया बन पड़े तो मनोकामना पूर्ण होने में कोई सन्देह नहीं होना चाहिए। सैकड़ों लोगों ने इसके द्वारा अपनी कामनाएँ पूरी कीं और आपभी कर सकते हैं। इस नोट को प्रति दिन दो बार सबेरे आँख खुलने पर और रात को सोने से पहले मध्यम स्वर में पढ़िये। दिन-रात इस बात को याद रखने की आवश्यकता नहीं है। आठ-दस दिन ऐसा करने के बाद देखिये कि आपको क्या उपाय सूझता है। जब आपकी चाह और आपके विश्वास में एक विशेष दर्जे की तीव्रता आ जायगी तो आपके मन में एक चमक-सी पैदा होगी और सारा कार्यक्रम एक दम आपके सामने प्रस्तुत हो जायगा। फिर उस कार्यक्रम के अनुसार तुरन्त ही कार्यवाही प्रारम्भ कर दीजिये। यही कार्यक्रम आपके उद्देश्य की पूर्ति में सर्वश्रेष्ठ सिद्ध होगा, चाहे इस समय वह ठीक-ठीक आपकी समझ में न आये, इससे बढ़ कर कार्यक्रम आप अपनी तर्क-शक्ति के सहारे कदापि नहीं बना सकते।

संसार में बड़े-बड़े काम करने वाले व्यक्तियों जैसे कोलम्बस, नैपोलियन, एडीसन आदि का कार्यक्रम पहले इसी प्रकार निश्चित होजाया करता था तब वे किसी बड़े कार्य में हाथ डालते थे। इन व्यक्तियों ने अपने कार्यों से संसार को किस तरह हिला दिया, यह सब जानते हैं।

कल्पना



पिछले अध्याय में वर्णन हो चुका है कि आत्म-संकेत की क्रिया में कल्पना बहुत बड़ा भाग लेती है। कल्पना ही के द्वारा अभीष्ट वस्तु का चित्र मस्तिष्क में स्थिर किया जाता है और बाद को कल्पना ही के द्वारा उसकी प्राप्ति के लिए कार्यक्रम की रूप-रेखा तैयार की जाती है। साधारणतया लोग कल्पना के एक पहलू को ध्यान में रख कर उसे निरादर की दृष्टि से देखते हैं। जो मनुष्य अपने मन में निरर्थक सङ्कल्प-विकल्प और भौंति-भौंति की कल्पनाएँ उठाता रहता है और मन ही मन उनका रस लेकर तृप्त होता रहता है, उसे लोग ख़ब्ती कहते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि ऐसा मनुष्य दुनियाँ के काम-काज में दिलचस्पी लेने के अयोग्य हो जाता है और सदैव उसकी यही कामना रहती है कि कब अकेले में जाकर बैठने का अवकाश मिले और वह अपनी कल्पनाओं में मनमानी दुनियाँ बसा कर उसका आनन्द भोगे ; क्योंकि उसे इस कर्म-भूमि संसार में काम-काज के सम्बन्ध में परिश्रम करना पड़ता है, जिससे वह घबराता है और कल्पना में वह सुगमता-पूर्वक अपनी इच्छानुसार जो दशा उसे प्रिय है उसका अनुमान करके मन ही मन गुलछर्रे उड़ा सकता है। निस्संदेह इस प्रकार की कल्पना निंदनीय है। यह मनुष्य को संसार के काम के लिए बिलकुल बेकार कर देती है। मनुष्य

परले दर्जे का आलसी हो जाता है और उसकी इच्छाशक्ति कमजोर पड़ जाती है। जो मनुष्य संसार में अपनी उन्नति चाहता है उसे इस आदत से बचे रहना चाहिए। इस प्रकार की कल्पना विनाश की ओर ले जाने वाली है।

लेकिन नवीन मनोविज्ञान बतलाता है कि अगर कल्पना से इस प्रकार के बुरे परिणाम निकलते हैं तो यह कल्पना-शक्ति का दोष नहीं है बल्कि उस व्यक्ति का है जो इसका उपयोग करता है। कल्पना तो एक उच्च कोटि की शक्ति है जिसके बिना संसार के बड़े-बड़े काम पूरे नहीं हो सकते। इसी की सहायता से मनुष्य बड़े-बड़े कामों को करने के उपाय स्थिर करता है, आविष्कार करता है और खोज करता है। जिन मनुष्यों में कल्पना की शक्ति कम होती है वे आविष्कारक, खोज करने वाले, राजनीतिज्ञ या कोई अन्य निर्माणात्मक कार्य करने वाले नहीं हो सकते। संसार में जितना भी उन्नति का कार्य हुआ और हो रहा है उसमें अधिकांश भाग कल्पना ने ही लिया है और ले रही है। पेट्रो-लियम यानी मिट्टी के तेल के कुँ खोदे जाने के बहुत पहले ही इसकी कल्पना एक व्यक्ति ने की थी; फिर उस तेल को साफ करने की तरकीब हाथ लगने से पहले किसी के चित्त में उसकी कल्पना हुई थी। इसलिए कल्पनाशक्ति को नियमानुसार और वैज्ञानिक रीति से बढ़ाना प्रत्येक मनुष्य के लिए, जो अपनी उन्नति चाहता है, आवश्यक है।

अब प्रश्न उठता है कि वह वैज्ञानिक रीति क्या है जिससे

इस कल्पना शक्ति को बढ़ाया जा सकता है और अपनी चाह की पूर्ति के लिए उसे उपयोगी बनाया जा सकता है। नवीन मनोविज्ञान इसकी यह युक्ति बतलाता है—

१—जो वस्तु या स्थिति आपके लिए लाभदायक है या आपके कार्य की सिद्धि में उपयोगी है और जिसको आप मनाकाश के सुपुर्द करके चाहते हैं कि वह वस्तु या स्थिति आपको प्राप्त हो, पहले उसका स्पष्ट और सुनिश्चित चित्र अपनी कल्पना में बनायें।

२—अपने कार्य की सिद्धि के लिए जो कार्य-विधान आपकी समझ में आता हो उस पर अपना पूरा ध्यान एकाग्र करने की आदत डालें और जो दूसरे विचार और चित्र आपकी कार्यसिद्धि में बाधक हों या जिनका उससे कोई सम्बन्ध न हो, उनको बलपूर्वक अपने मन से हटाते रहें।

३—जिस कार्य की सिद्धि आप चाहते हैं उसका चित्र इतना स्पष्ट बनायें मानों आपका कार्य सिद्ध हो चुका है। अर्थात् जैसा आप बनना चाहते हैं वैसा अपने आपको, अपनी कल्पना में बना हुआ देखने लगें।

४—जिस भावना को आप अपने हृदय में उत्पन्न करना चाहते हैं वह बाहर की जिस सामग्री या परिस्थिति से पैदा होती है उसका चित्र कल्पना में बनाकर उस भावना को अनुभव करें।

निम्नलिखित उपाय उपयोग में लाये जायें तो इनसे कल्पना-शक्ति को बढ़ाने और उसे लाभदायक बनाने में बड़ी सहायता मिल सकती है:—

१—मनाकाश में ऐसे संस्कार डाला करें जो आपके लिए लाभदायक हों; और जो बातें हानिकारक हों उनका विचार मन में न उठने दें, जिससे उनके संस्कार मनाकाश पर न पड़ने पायें।

२—सदैव कल्पना को अपने काम के सम्बन्ध में नये-नये उपाय और तरकीबें सोचने या किसी उपयोगी बात को टूँट निकालने में लगाये रखें। व्यर्थ ही शेखचिल्लियों की तरह बेकार की बातों में बह जाने से उसे रोकते रहें।

३—आपके कल्पना करने में सदैव कोई अभिप्राय हो और जो विचार ऐसे उठें जिनका उस अभिप्राय से कोई सम्बन्ध नहीं है, उनको उठने से रोकते रहें। हमेशा अपने अभिप्राय पर ही दृष्टि रखें।

एकाग्रता

हमको मालूम होगया कि अपनी चाह की पूर्ति के साधनों में कल्पना का एक महत्व पूर्ण स्थान है। पहले तो जो हमारा आदर्श है यानी जिस वस्तु को हम प्राप्त करना चाहते हैं उसका वह एक मानसिक चित्र हमारे सामने प्रस्तुत करती है; दूसरे वह इच्छा, विश्वास, संकल्प आदि मानसिक शक्तियों को जो उस आदर्श की पूर्ति में सहायक होती हैं, एकत्र कर देती है, यहाँ तक कि हमारा ध्यान इतना एकाग्र हो जाता है कि हमारा अस्तित्व ही मानों उस आदर्श का रूप धारण कर लेता है। इसका परिणाम यह होता है कि हमारा सम्बन्ध मनाकाश से जुड़ जाता है और मनाकाश की शक्तियों के लिए हमारे मन में प्रविष्ट होने का मार्ग खुल जाता है। एकाग्रता में महान् शक्ति है। देखने में आता है कि यदि ध्यान किसी दूसरी ओर है और शरीर में चोट लग जाती है या दर्द हो रहा है या पास में ही बड़ा शोर मच रहा है, तो मनुष्य को उसकी खबर भी नहीं होती। मनुष्य किसी ओर तब ध्यान देता है जब वह उसकी इच्छा करता है और किसी ओर ध्यान देने की इच्छा तब होती है जब उसमें उसकी रुचि हो। यदि उस वस्तु में उसकी रुचि विशेष है तो इच्छा शक्ति का काम हलका होजाता है। मन

अपने आप एकाग्र हो जाता है और एकाग्र रहता है। जो खेल या किताब या कोई वस्तु आपको रुचिकर है उसमें आपका ध्यान कैसे एकाग्र होजाता है। किसी और बात की खबर भी नहीं रहती। आप जी जान से उसमें तन्मय हो जाते हैं और उसमें चित्त-वृत्ति लगाने में आपको आनन्द आता है और आप का जी उससे कभी उकताता नहीं। चूंकि मनाकाश में अपनी चाह की पूर्ति के विचारों के अंकन डालने में चित्तवृत्ति को उन विचारों की ओर प्रेरित करके उन पर जमाना पड़ता है इसलिए यह विचार करना आवश्यक होजाता है कि चित्त वृत्ति कैसे एकाग्र की जाय।

१—यह दर्शन का एक नियम है और प्रतिदिन के अनुभव में भी आता है कि किसी वस्तु में रुचि उत्पन्न हो जाने के पश्चात् उसकी ओर चित्त का रुझान हो जाता है और किसी वस्तु की ओर बार बार ध्यान देने से उसमें स्वयं ही रुचि उत्पन्न हो जाती है। रुचि उत्पन्न हो जाने से फिर चित्त वृत्ति सहज ही उस की ओर दौड़ जाती है और रुचि के अभाव में चित्त को किसी वस्तु में एकाग्र करना बहुत कठिन हुआ करता है। लेकिन उस वस्तु के विभिन्न अंगों का निरीक्षण करने से उस वस्तु में रुचि उत्पन्न होने लगती है। प्रायः देखा जाता है कि किसी पुस्तक का लेख बहुत शुष्क और नीरस प्रतीत होता है लेकिन जब हम ध्यानपूर्वक उसे पढ़ने लगते हैं तो धीरे धीरे वह लेख रुचिकर जान पड़ने लगता है। नियम यह है कि पहले किसी वस्तु का

ध्यान पूर्वक अवलोकन किया जाय, तब उसमें रुचि उत्पन्न हो जायगी और रुचि पैदा होने पर उसमें चित्त लगाना सहज हो जायगा, फिर रुचि और बढ़ेगी और चित्त का उसमें एकाग्र करना और भी सुगम होजायगा ।

२—किसी एक ही वस्तु पर अधिक देर तक ध्यान जमाने से मन थक जाता है और फिर उसमें उतनी एकाग्रता नहीं रह पाती । चित्तवृत्ति को आराम देने की आवश्यकता होती है । इसीलिए उचित है कि जिस लक्ष्य या वस्तु पर चित्त एकाग्रकरना है उसके एक ही पहलू पर दृष्टि न रखे, बल्कि कभी उस के एक पहलू पर ध्यान जमाये और कभी दूसरे पर । ऐसा करने से चित्तवृत्ति निर्विघ्न रूप से एकाग्र हो जाती है । निर्विघ्न एकाग्रता में बड़ी शक्ति है । जिस प्रकार आतिशी शीशे के द्वारा सूर्य की किरणों को एकाग्र करने से आग पैदा हो जाती है ठीक उसी प्रकार यदि चित्तवृत्ति पूर्णतया एकाग्र करके आत्म-संकेत की रीति से अपना विचार मनाकाश में प्रविष्ट करें तो आपके मन में एक चमक पैदा हो जाती है और आपको अपना मार्ग सूझ जाता है ।

जब मनुष्य किसी विचार या उद्देश्य पर अपनी चित्तवृत्ति एकाग्र करता है तो वह एक ऐसी अदृश्य-शक्ति को गति-शील कर लेता है जो उस उद्देश्य को पूरा कर देती है और वह शक्ति अपार ईश्वरीय शक्ति है और हर मनुष्य के भीतर भी विद्यमान है । नेपोलियन हिल ने अपनी फिलासफी में इस ईश्वरीय शक्ति का

उल्लेख नहीं किया लेकिन प्रेंटिसमलफोर्ड ने, जो अमरीका का एक प्रसिद्ध दार्शनिक और तत्ववेत्ता हुआ है और जिसने इस नवीन मनोविज्ञान के प्रत्येक विभाग का विस्तार पूर्वक वर्णन किया है, इस ईश्वरीय शक्ति पर बहुत जोर दिया है और इस फिलासफी में ईश्वर के प्रति प्रार्थना को एक बहुत महत्वपूर्ण स्थान दिया है।

कार्य-विधान

पिछले अध्यायों के अध्ययन से यह स्पष्ट हो गया कि बिना सच्ची और गहरी चाह उत्पन्न हुए किसी प्रकार की उन्नति नहीं हो सकती। पहले चाह उत्पन्न होती है उसके पश्चात् कल्पना के द्वारा उसकी पूर्ति के लिए कार्य-विधान या काम करने का नक्शा तैयार किया जाता है। धन की प्राप्ति के लिए जिन-जिन साधनों की आवश्यकता है उनका वर्णन पहले कर चुके हैं। उनमें एक साधन यह था कि धन की प्राप्ति के लिए अपना कार्य-विधान बनायें।

प्रत्येक मनुष्य के लिए, जिसके हृदय में धन की चाह उत्पन्न होती है, विद्वान होना आवश्यक नहीं है और न स्कूलों-कालेजों की साधारण शिक्षा धन प्राप्त करने में अधिक सहायक होती है। हेनरी फोर्ड ने केवल छठे दर्जे तक शिक्षा पाई थी, लेकिन विद्या के इस अभाव से उसके धनवान होने में कोई बाधा नहीं पड़ी। यह अवश्य है कि जो लोग उन्नति के ऊंचे शिखर पर पहुँचे उन्होंने जहाँ से हो सका अपने व्यवसाय के लिए हर प्रकार की जानकारी पाने का सदैव प्रयत्न किया। आज कल इस प्रकार की जानकारी प्राप्त करने के लिए पूरी सुविधाएँ हैं। मसलन् किसी कारखाने या फर्म में जाकर काम सीखना, डाक द्वारा शिक्षा प्राप्त करना, रात्रि-पाठशाला में भर्ती होना आदि-आदि।

विदित हो कि किसी कारखाने या फर्म में भर्ती होकर छोटे काम करने में उतना हर्ज नहीं है; हर्ज उस पर ही सन्तोष कर लेने और आगे उन्नति करने का हौसला न करने में है।

अपने साथ ऐसे व्यक्तियों को सम्मिलित करें जो आपके धन-प्राप्ति के कार्यविधान से पूरी सहानुभूति रखते हों और आपकी तरह उस कार्यविधान के अनुसार चलने को तैयार हों। जिस प्रकार की विद्या या अनुभव की आवश्यकता अपने कार्य-क्रम की पूर्ति के लिए आपको हो, उसी के अनुकूल व्यक्तियों को सम्मिलित करें, परन्तु यह ध्यान रखें कि उनमें कोई व्यक्ति ऐसी दुर्बल प्रकृति का न हो कि थोड़ी सी असफलता होने पर हताश हो जाय और हाथ-पैर ढीले करदे। आप देखेंगे कि आकर्षण के नियम के अनुसार स्वयं ही ऐसे व्यक्ति आपको सहज में मिल जायेंगे। जिस समय कुछ व्यक्ति एक ही विचार के और एक ही भावना लिये हुए एकत्र होकर सोच-विचार करते हैं तो एक विशेष शक्ति उत्पन्न हो जाती है, जिससे कार्य-विधान सुगमता पूर्वक तैयार हो जाता है। यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि जिन लोगों को आप अपने साथ इस प्रकार सम्मिलित करते हैं उनके लाभ और उनकी उन्नति का भी पूरा प्रबन्ध रहे।

पूरी सफलता प्राप्त होने से पहले हर किसी को अक्सर अपने प्रयत्न जारी रखते हुए बीच में छोटी-मोटी असफलताओं का सामना करना पड़ता है। बल्कि बड़े बड़े आदमियों का अक्सर यह अनुभव है कि जब उनको कोई असफलता हुई और

वे बहुत अधिक हताश होगये तो कुछ और धैर्यपूर्वक जमे रहने पर उन्हें उच्च कोटि की सफलता प्राप्त हुई और उनका उद्देश्य पूरा होगया ।

एक दिन एक पत्र प्रतिनिधि ने प्रसिद्ध विज्ञान शास्त्री टामस एडिसन से पूछा—“क्यों जनाव, क्या आपके सारे आविष्कार उच्च प्रेरणाओं के परिणाम हैं ? रात को जब आप जागते हैं तब क्या उन्हीं को सोचा करते हैं ?”

“नहीं भाई केवल ग्रामोफोन को छोड़कर करने लायक और कोई भी काम मैंने अचानक नहीं किया । मेरे सब आविष्कार सतत प्रयत्नों के फलमात्र हैं । पहले मैं देख लेता हूँ कि कौनसी बात लाभ-जनक होगी और जान का मोह छोड़कर उसके पीछे पड़ जाता हूँ । जिस बात को मैं शुरू करता हूँ वह सदा मेरे दिमाग में रहती है और जब तक पूरी नहीं होजाती मुझे चैन नहीं पड़ता ।”

बुलवरने दैव से युद्ध करके अपने भाग्य को बदल दिया । उसका पहला उपन्यास असफल रहा । उसकी प्राथमिक कविताएं अच्छी सिद्ध न हुईं । उसके यौवन-काल के भाषणों ने विरोधियों को उसकी खिल्ला उड़ाने का मौका दिया, परन्तु उसने अपनी असफलता, हार और व्यंग-उपहास के बादलों को भी अपनी चमक दिखाई ।

एक विचारक का कथन है कि प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करने से शक्ति मिलती है क्योंकि विरोध से प्रतिकार

करने की अधिक से अधिक ताकत पैदा होती है। एक बाधा को दूर करने से उससे कठिन दूसरी बाधा को दूर करने की शक्ति आजाती है।

कहने का मतलब यह है कि असफलताएं बहुधा परिवर्तन-विन्दु सिद्ध होती हैं। इसलिए इस प्रकार की असफलताओं के सामने आने पर घबराना नहीं चाहिए। अगर विश्वास पक्का है तो अपने निश्चय में अध्यवसाय पूर्वक टढ़ रहना चाहिए और याद रखना चाहिए कि असफलता की प्रत्येक दशा में किसी दूसरी लाभदायक दशा का बीज विद्यमान रहता है।

कारलाइल ने लिखा है कि प्रत्येक अच्छा कार्य पहले असम्भव रहता है। जेरमीकौलियर का कथन है कि हमेशा आगे बढ़ते रहने और विश्वास करने से कठिनाई दूर हो जाती है और दिखाई देने वाली असम्भाव्यता नष्ट हो जाती है।

शेरिडन के पार्लामेंट में भाषण कर चुकने के बाद एक सम्वाददाता ने कटान करते हुए उससे कहा, मुझे कहते हुए अफसोस होता है कि यह कार्य आपकी शक्ति के बाहर है। शेरिडन थोड़ी देर तक सोचता रहा। फिर मुँह ऊँचा करके उसने कहा—“जनाब यह काम मेरी शक्ति के भीतर है और इसकी सचाई आप शीघ्र ही देखेंगे।” इसी शेरिडन के वारेन हेस्टिंग्स के विरुद्ध किये गये भाषणों को सुनकर प्रभिन्न वक्ता फाक्स ने कहा था कि ऐसा भाषण कामन्स सभा में आज तक कभी नहीं हुआ।

नेपोलियन हिल लिखते हैं कि एडिसन, जो संसार का सबसे बड़ा आविष्कारक और वैज्ञानिक हुआ है, प्रारम्भ में तारधर में एक साधारण कारीगर था। उसको असंख्य बार असफलता का मुँह देखना पड़ा तब कहीं अन्त में उसकी प्रतिभा जाग उठी और वह ऊँचे पद पर पहुँच गया।

एडिसन प्रतिभाशाली तो था ही लेकिन प्रतिभा से भी बढ़ कर लगन और रगड़ की प्रकृति उसमें आश्चर्यजनक मात्रा में विद्यमान थी। ग्रामोफोन के आविष्कारक के रूप में वह संसार में प्रसिद्ध है। ग्रामोफोन जैसे अद्भुत यंत्र का आविष्कार करना ही क्या कम आश्चर्य-जनक बात थी जिसके द्वारा हर प्रकार के शब्द सुगमता पूर्वक उत्पन्न किये जा सकते हैं और सैकड़ों वर्ष तक गये हुये लोगों की बोली सुनी जा सकती है। पर जो अभ्यवसाय इस व्यक्ति ने केवल एक अक्षर 'स' की आवाज उत्पन्न करने में दिखाया वह आश्चर्यजनक है। सब अक्षरों की आवाज तो उसने फोनोग्राफ से निकाल ली पर 'स' अक्षर की आवाज नहीं निकली। जब वह अंगरेजी शब्द 'स्पेशिया' का उच्चारण उस यंत्र में करता था तो यंत्र से केवल 'पेशिया' की आवाज निकलती थी और किसी प्रकार भी 'स' का स्वर नहीं निकलता था। वह बहुत हैरान हुआ फिर भी उसने पीछा नहीं छोड़ा। लगातार सात महीने तक रात दिन १८-१८, २०-२० घंटे वह व्यक्ति इस एक अक्षर को यंत्र पर रटता रहा और अंत में उस यंत्र से पूरा शब्द स्पेशिया उच्चारण करा के ही छोड़ा

और उसकी सच्ची लगन और विश्वास का फल उसे अंत में प्राप्त हो ही गया ।

उपरोक्त उदाहरणों को सामने रखते हुए आपको इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि आप जिन व्यक्तियों को अपने कार्य में सम्मिलित करना चाहते हैं उनमें से कोई ऐसा दुर्बल-मन तो नहीं है कि जरा सी असफलता देख पड़ने पर उसका मन बैठ जाय और वह हाथ पैर ढीले करदे ।

यह बहुत ही आवश्यक है कि जो व्यक्ति आपके साथ सम्मिलित हों उन सबका आपके साथ, तथा उनका आपस में भी, पूरा सहयोग हो और बना रहे । सबके हृदयों से एक स्वर निकलना चाहिए, तब वह मनोनियमानुकूल दशा उत्पन्न हो जाती है जो सफलता का कारण होती है ।

जिस प्रकार रसायनिक द्रव्यों के आपस में मिलने से एक नया पदार्थ उत्पन्न हो जाता है इसी तरह जब कुछ व्यक्ति, जिनका हृदय एक ही भावना से प्रेरित हो, किसी समस्या पर आपस में विचार-विनिमय करते रहते हैं तो उस समस्या के हल के लिए एक नया ही उपयुक्त विचार सूझ जाता है । ऊपरी तौर पर देखने में यह जान पड़ता है कि जिस व्यक्ति ने वह विचार प्रकट किया है, वह उसी के मस्तिष्क की उपज है परन्तु वास्तव में बात यह है कि यदि उन व्यक्तियों में इतना पारस्परिक विचार-विनिमय न हुआ होता तो वह विचार उस व्यक्ति के मन में न उठता । बड़ी-बड़ी कम्पनियों को जो जो सफलता प्राप्त होती है

उसका असली रहस्य यही होता है ।

कार्य में सफलता के लिए आप में (और आपके साथ सम्मिलित होने वाले अन्य व्यक्तियों में) अध्यवसाय की बहुत बड़ी आवश्यकता है । अध्यवसाय की आदत डालने का यह उपाय है कि पहले अपना उद्देश्य निश्चित कर लें और उसकी पूर्ति की तेज चाह उठावें । फिर अपना कार्य विधान तैयार करें और ऐसे मनुष्यों और विचारों से अपने को बचाते रहें जो निराशा पैदा करने वाले हों या उस कार्य-विधान को क्रियात्मक रूप देने में विघ्नकारक हों और इसके बदले दो-एक ऐसे व्यक्तियों को अपने साथ मिला लें जो आपके विचार के हों और आपकी हिम्मत बँधायें और कार्य-विधान निश्चित करने में और उसके अनुसार चलने में आपकी सहायता करें । यही नियम इस पुस्तक में बतलाये गये हैं और उनकी आदत डालने की सलाह दी गई है । ऐसी आदत पड़ जाने पर मनुष्य का अपने हर मामले में सफल होना केवल कारण-कार्य की बात रह जाती है ।

नेपोलियन हिल अपनी पुस्तक *Think and Grow Rich* में कहते हैं कि मिसेज़ वालिस सिम्पसन एक साधारण महिला थी । कहा जाता है कि उसे बहुत दिनों से एडवर्ड अष्टम से प्रेम था और उनसे भेंट होने से पहले से था । उसे यही धुन सवार थी और किसी प्रकार की बदनामी, आलोचना और मनुष्य के बनाये हुए विवाह-सम्बन्धी नियम आदि की तनिक भी परवाह न थी । केवल प्रेम ही उसके मन पर अधिकार जमाये

हुए था। उसे कई बार हताश होना पड़ा परन्तु वह अपने इरादे में दृढ़ रही। उसे महारानी बनने का जरा भी शौक न था। अगर चाह थी तो केवल यह कि उसे उसका प्रियतम प्राप्त हो जाय। अन्त में उसने बादशाह का प्रेम अपनी ओर आकर्षित कर ही लिया और उसका विवाह उनके साथ हो ही गया। इस विवाह के सम्बन्ध में लोगों के जो भी विचार हों, उससे मतलब नहीं। मिसेज सिम्प्सन की यह कहानी अध्यवसाय का एक ज्वलन्त उदाहरण है। इसी प्रकार एडवर्ड अष्टम का प्रेम मिसेज सिम्प्सन के साथ सच्चा था। उन्होंने राज-वैभव आदि किसी भी बात की परवाह नहीं की। बादशाहत को भी क्षण भर में लात मार दी। सारी प्रभुता प्राप्त होते हुए भी उनके हृदय में एक स्थला, एक सूनापन था। उनको केवल एक प्रेम की चाह थी। उन्होंने अपनी इस चाह की पूर्ति के लिए दुनिया के ऐश्वर्य को तिलांजलि दे दी। उन्होंने अपने इस उदाहरण से सिद्ध कर दिया कि जब कोई व्यक्ति किसी चाह को अपने दिल में जगह दे देता है और उसमें दृढ़ रहता है और उसका मूल्य चुकाने के लिए तैयार हो जाता है तो उसके रास्ते की सारी कठिनाइयाँ और रुकावटें आप से आप हट जाती हैं और वह व्यक्ति अपने इरादे में सफल हुए बिना नहीं रहता।

नौकरी

अगर आप अपनी सेवाएं देकर धन प्राप्त करना चाहते हैं तो भी जो युक्ति पिछले अध्यायों में बतलाई गई उसी के अनुसार काम करने से ऊँची सफलता प्राप्त होगी। नीचे जो उपाय नौकरी पाने का दिया गया है वह बहुत लोगों के अनुभव के आधार पर है।

१—पहले यह देख लीजिये कि आपकी रुचि किस काम की ओर है—जैसे व्यापार, शिक्षा, उद्योग, लेखन, कानून, डाक्टरी आदि। अपनी रुचि के अनुसार काम करने में चित्त प्रसन्न रहता है और काम में तबियत लगती है और इसी वजह से उन्नति की विशेष सम्भावना रहती है।

हो सके तो ऐसा कार्य चुनना चाहिए जिसमें आप अपने अनुभव और वृत्ति को सबसे अधिक मात्रा में केन्द्रीभूत कर सकें। ऐसा करने से न केवल आपको अपने कार्य में आनन्द आयेगा बल्कि उसमें आप अपनी सबसे अधिक योग्यता और बुद्धि लगा सकेंगे और यही आपका सबसे श्रेष्ठ मूलधन है।

२—फिर मन में निश्चय कीजिये कि चुने हुए कार्य-क्षेत्र में कौनसा विशेष काम आपको पसन्द है और यह भी देखिये कि क्या आपमें उस विशेष कार्य को करने की योग्यता मौजूद है।

३—यह देखिये कि जिस संस्था या कम्पनी या विभाग में आप काम करना चाहते हैं, क्या उसकी नीति और उसके कार्य-कर्त्ताओं का व्यवहार आपके अनुकूल है और वहां उन्नति करने

का अवसर आपको मिल सकता है।

४—फिर देखिये कि उस जगह काम करके उस संस्था या कम्पनी को लाभ पहुँचाने के लिए क्या आपने कोई विशेष युक्तियाँ सोच रखी हैं। वहाँ तभी आपकी कदर हो सकती है और आपको उन्नति करने का अवसर मिल सकता है जब आप अपने आपको लाभदायक सिद्ध करें। यह बहुत ही आवश्यक और ध्यान देने योग्य बात है।

५—जब आपकी युक्तियाँ या साधन निश्चित हो जायँ तो उनको अच्छी तरह सुन्दर लिपि में लिख कर या टाइप करके उस कार्यालय के अफसर के पास अपने आवेदन पत्र के साथ प्रस्तुत करें। आवेदन पत्र बड़े परिश्रम और सावधानी से लिखना चाहिए क्योंकि इससे प्रार्थी की योग्यता और सुरुचि का पता लग जाता है।

६—आवेदन पत्र में नीचे लिखी बातें क्रमानुसार लिखनी चाहिएँ:—

(अ) शिक्षा कहाँ तक पाई और किस विषय में विशेष योग्यता प्राप्त की।

(ब) उस कार्य के करने का अपना पूर्व अनुभव, जिन-जिन जगहों में पहले काम किया हो उनके और अपने पिछले अफसरों के हवाले देकर।

७—यदि किसी ऊँचे कार्य के पद के लिए आवेदन पत्र भेजा जाय तो अपना फोटो भी साथ भेजना चाहिए, क्योंकि ऐसी जगहों के लिए प्रार्थी के व्यक्तित्व की ओर विशेष ध्यान रखा जाता है।

८—यदि आप यह भी लिखें कि एक-दो सप्ताह के लिए बिना वेतन परीक्षण के लिए आप काम करने को तैयार हैं तो यह बहुत अच्छा है। इससे आपके आवेदन में विशेष बल आ जाता है।

९—यदि आप किसी ऊँचे कार्य के पद के लिए आवेदन-पत्र देना चाहते हैं तो इसके लिए आवश्यक है कि पहले जिस संस्था या कम्पनी में नौकरी करनी है वहाँ की वार्षिक रिपोर्ट या दूसरे द्वारों से उसकी नीति की जानकारी प्राप्त करें और यह पता लगायें कि वहाँ किस प्रणाली से कार्य किया जाता है और आप किस प्रकार उसके उद्देश्य की पूर्ति में सहायक हो सकते हैं और किन-किन बातों में उन्नति करके उस संस्था या कम्पनी को लाभ पहुँचा सकते हैं। यदि यह बात भी लिख कर आवेदन पत्र के साथ जोड़ दी जाय तो इसका बड़ा असर होगा। कम्पनी को ज्ञात हो जायगा कि आपको उसके काम में विशेष रुचि और थोड़ी बहुत जानकारी भी है, और तब आपके आवेदन पत्र पर विशेष रूप से विचार किया जायगा क्योंकि जिस तरह अच्छी नौकरी का मिलना कठिन है उसी प्रकार अच्छे नौकर का मिलना भी कठिन है।

प्रसिद्ध लेखक नेपोलियन हिल की पुस्तक Think and Grow Rich में इस विषय का बहुत ही मनोरञ्जक और प्रभाव-शाली ढङ्ग से वर्णन किया गया है, जो कि पढ़ने योग्य है।

आवश्यक सलाह

आपने सम्पत्ति प्राप्त करने की सारी फिलासफी को पढ़ लिया। अगर आपके हृदय में सम्पत्ति प्राप्त करने की या अपनी उन्नति की सच्ची चाह है तो आपने उसे अवश्य ध्यान देकर पढ़ा होगा। सम्पत्ति किसी प्रकार की हो सकती है—धन की, नाम-वरी की, ऊँचे पद की, राजनैतिक नेतृत्व की या किसी अन्य चाही हुई वस्तु की। हमारी सलाह है कि आप इस पुस्तक को दूसरी बार बल्कि तीसरी बार भी पढ़ें जिससे कि इस फिलासफी के सिद्धान्त पूरे-पूरे आपकी समझ में बस जायँ। फिर निर्णय करें कि आप हाथ-पैर ढीले करके जम्हाई लेते हुए या अपने आपको कमजोर समझ कर निरुत्साहिता में अपना समय बिताना पसन्द करेंगे या आँख खोलकर उन्नति की इस नई फिलासफी से लाभ उठाने के लिए तैयार होंगे। आपको अपनी उन्नति स्वयं करनी होगी। इसके लिए कोई दूसरा व्यक्ति आपको विवश नहीं कर सकता। जब आपके हृदय में स्वयं अपनी उन्नति की चाह उठेगी तब उन्नति का मार्ग खुल सकता है। सब जानते हैं कि टाल-मटोल निश्चय के विपरीत है और किसी काम

को टालते रहने से कोई व्यक्ति सफल नहीं हो सकता। निश्चय करने में इस बात का ध्यान रखना होगा कि निश्चय अटल हो न कि उसको बारबार बदला जाय।

सेंट बरनार्ड की घाटी का निरीक्षण करके लौटे हुए इंजीनियरों से नेपोलियन ने पूछा 'क्या रास्ता पार करना सम्भव है?' इंजीनियरों ने कुछ भिन्नकते हुए कहा, 'जी, शायद हम पार कर सकें।' 'सिपाहियों, आगे बढ़ो' सामने दिखाई देने वाली बहुत-सी महान कठिनाइयों की ओर किंचित ध्यान दिये बिना नेपोलियन के मुँह से निकल पड़ा। इङ्गलैंड और आस्ट्रिया के लोग इस नाटे कद के नवयुवक की बातों को सुनकर हँसते थे और कहते थे कि साठ हजार मनुष्यों की सेना, सैकड़ों मन युद्धास्त्र के साथ आल्प्स पहाड़ को भला कैसे पार कर सकती है। परन्तु उसी समय जेनेवा में उसका साथी मासेना शत्रुओं से घिरा भूखों मर रहा था, विजयी आस्ट्रियन नीस के फाटकों पर धावा कर रहे थे। क्या ऐसे मंकट के समय नेपोलियन अपने साथियों से मुँह मोड़ सकता था? जब वह असम्भव बात सम्भव हो गई तो लोग कहने लगे—वाह यह कौन-सी बड़ी बात है, ऐसा तो पहले भी हो सकता था।

आवश्यकता पड़ जाने पर अपने निश्चय में सुधार कर लेना बुद्धिमानी है। परन्तु अस्थिर चित्त होना और अपना निश्चय जरा-जरा सी बात पर बदलना उतनी ही बड़ी मूर्खता है। अगर दूसरों की आलोचना या डर से आप अपना निश्चय बद-

लते रहेंगे तो आपके हृदय में सच्ची चाह धन या कोई और सम्पत्ति प्राप्त करने की कभी न उत्पन्न होगी और इस फिलासफो के नियमों से आप कुछ लाभ न उठा सकेंगे। इसलिए अगर आप इससे पूरा लाभ उठाना चाहते हैं तो अपना निश्चय पक्का करें और उसके अनुसार कार्य प्रारम्भ कर दें और उन लोगों को छोड़ कर जिनको आपने अपनी चाह की पूर्ति के लिए साधन निश्चित करने के सम्बन्ध में अपने साथ मिलाया है, हर किसी से अपने निश्चय की चर्चा न करें। निश्चय करने के बाद उसको पूरा करने के प्रयत्न में जुट जायँ। इस प्रयत्न में निर्विघ्न संलग्न रहने के लिए आपको अपनी संकल्प-शक्ति का प्रयोग करना होगा।

अक्सर ऐसा होता है कि काम शुरू करने में कोई खतरा दीख पड़ता है, या कोई ऐसी परिस्थिति पैदा हो जाती है जो तकलीफ देने वाली होती है। ऐसी दशा में यदि आपकी संकल्प-शक्ति सबल नहीं है तो आपसे वे साधन नहीं बन पड़ेंगे। संकल्प-शक्ति को दृढ़ करने का उपाय यह है कि कभी-कभी अपनी संकल्प-शक्ति का उपयोग करते रहें। दूसरी शक्तियों की भाँति संकल्प-शक्ति भी अभ्यास द्वारा दृढ़ की जा सकती है। इसके अभ्यास का साधन यह है कि कभी-कभी ऐसा किया करें कि जो कोई काम आपको बहुत रुचिकर हो, अपनी संकल्प शक्ति का बल लगाकर उसको करने से अपने आपको रोकें। उदाहरण के लिए आपके सामने अच्छे-अच्छे पदार्थ खाने के

लिए रक्खे जायँ तो जो चीज थाल में आपको सबसे अधिक प्रिय हो उसे न खायें या थोड़ी-सी खाकर छोड़ दें। मसलन गरमी का मौसम है, आप धूप में चले आ रहे हैं और परेशान हैं। उस वक्त आपके सामने बरफ डाला हुआ और केवड़ा पड़ा हुआ शर्बत पेश होता है। उस वक्त आप उसे पीने से इनकार कर दें या, कम से कम, कुछ देर के लिए पीना स्थगित रक्खें। जो चीज आपको अप्रिय हो उसे खायें। या कोई ऐसा काम आ पड़े जो कठिन जान पड़ता हो, या जिसके करने में कष्ट हो या जिसका करना नापसंद हो उसे तबियत पर जोर देकर करने की कोशिश करें। यही उपाय संकल्प-शक्ति को बढ़ाने का है।

संतुलनता भी एक मानसिक दशा है और यह उत्पन्न की जा सकती है और बढ़ाई जा सकती है। अगर आप निम्नलिखित बातों का ध्यान रक्खेंगे तो आप में संतुलनता का गुण आप से आप उत्पन्न हो जायगा :—

१—अपने मन में दृढ़ निश्चय करलें कि आपको किस वस्तु की आवश्यकता है।

२—ज्यों ही आपके हृदय में उस वस्तु की प्राप्ति की तेज चाह पैदा हो जाती है, उसकी पूर्ति के लिए प्रयत्नों में संतुलन रहना सुगम हो जाता है।

३—उस चाह की पूर्ति के प्रयत्नों का नक्शा अगर पूरा बन चुका है तो आपको उसकी सफलता का विश्वास हो जायगा और उसको क्रियात्मक रूप देने में आप अवश्य संतुलन रहेंगे।

४—जिन व्यक्तियों को आपने-अपने साथ इस कार्य में मिलाया है उनकी सहानुभूति उनके साहस और उनकी सहायता से भी दृढ़ता उत्पन्न हो जाती है।

विदित हो कि जो साधन इस पुस्तक में बतलाये गये हैं। वे योग साधन अर्थात् परमार्थी सम्पत्ति की प्राप्ति की क्रिया से मिलते जुलते हैं और आश्चर्य नहीं कि पाश्चात्य दार्शनिकों ने जो नवीन मनोविज्ञान और आत्म-संकेत के सिद्धान्त स्थिर किये वे योगाभ्यासियों के अनुभवों के आधार पर हों—चाहे वे अभ्यासी पाश्चात्य देश के हों चाहे पूर्वीय देश के।

योग साधन में क्या होता है ?

१—पहले मनुष्य संसार और उसके सामान की नाशमानता का अनुभव करके और यह देख कर कि उसमें दुःख का सामान बहुत अधिक है और सुख बहुत थोड़ा और निम्न कोटि का है, मन में विचार करता है कि इससे हटो और परमात्मा के चरणों में निवास प्राप्त करके सच्चा और अमर आनन्द प्राप्त करो।

२—ज्यों ही यह विचार मन में पक जाता है, मन के भीतर परमात्मा से मिलने की चाह उत्पन्न हो जाती है। जब यह चाह काफी तेज हो जाती है तब उसकी पूर्ति के लिए साधन या उपाय सोचने की सूझती है।

३—चूँकि इन साधनों से वह स्वयं अनभिज्ञ होता है, इस-लिए जिस प्रकार सांसारिक धन का इच्छुक विशेषज्ञों की खोज कर उनकी सहायता से अपना कार्य-विधान तैयार करता है, यह

परमार्थ का इच्छुक भी योग अभ्यास के विशेषज्ञ की खोज करने लगता है और यदि उसकी लगन गहरी और सच्ची है तो आकर्षणके नियम के अनुसार ऐसे महात्मा जो अभ्यास करके परमात्मा का साक्षात्कार कर चुके हैं और जिनको गुरु या सतगुरु कहते हैं, सहज में मिल जाते हैं और जिज्ञासु को उसकी इच्छा की पूर्ति का साधन किसी पवित्र नाम का जप और पवित्र स्वरूप का ध्यान आदि बतलाते हैं और उसके अभ्यास में सहायता देते रहते हैं।

४—यह पूरे ध्यान और शौक के साथ उस नाम का जाप करता है और स्वरूप में ध्यान जमाता है। बार-बार इस अभ्यास को करके और उसमें सच्चे और गहरे प्रेम तथा गहरी भावना सम्मिलित करके रात-दिन अपनी चाह के संस्कार अपने मनाकाश में प्रविष्ट करता रहता है। जब उसके हृदय में चाह इतनी तेज हो जाती है कि विरह का रूप धारण कर लेती है तब मनाकाश से उसका उत्तर मिलता है और उसे अपने अन्दर एक चमक या प्रकाश जान पड़ता है। तब उसका रास्ता खुल जाता है और काम चल निकलता है और यथा समय वह परमात्मा का साक्षात्कार करके अपनी मनोकामना पूरी कर लेता है।

यही साधन तो इस पुस्तक में संसार की सम्पत्ति प्राप्त करने के लिए बतलाया गया है। फिर इसके उपयोगी और प्रभावशाली होने में क्या सन्देह हो सकता है। आप पूरे विश्वास के साथ इसके अनुसार चलें और अपनी अभिलाषा पूरी करें।

दयालबाग की संस्थाएँ—लौकिक और परमार्थी। इसी नियम के अनुसार चल रही हैं। वहाँ के प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में परमार्थी उन्नति प्राप्त करने की प्रबल चाह मौजूद है और उसका विश्वास है कि उसका नेता उसकी उस चाह की पूर्ति में पूरी सहायता दे सकता है। इसलिए उसकी आज्ञा के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति उसके बतलाये हुए साधन की कमाई में तत्पर रहता है और जो लौकिक संस्थाएँ उसने उस साधन के सिलसिले में स्थापित की हैं उनमें वह जी-जान से अपनी सेवाएँ अर्पण कर देता है। दयालबाग ने अपने जीवन के थोड़े से ही वर्षों में जो आश्चर्यजनक उन्नति की है वह लोक प्रसिद्ध है।

मानसिक चिकित्सा

इस पुस्तक में अपने पढ़ा है कि संपत्ति प्राप्त करने में मानसिक संकेत-विशेषतया उसका एक महत्वपूर्ण विभेद आत्म-संकेत — एक विशेष भाग लेता है। इस मानसिक संकेत के सिद्धान्त से आजकल कई एक बड़े बड़े काम लिये जा रहे हैं। उनमें से एक मानसिक चिकित्सा है, जिसके द्वारा बिना औषधि केवल मानसिक संकेत द्वारा रोगों की चिकित्सा की जाती है। नवीन मनो-विज्ञान के अनुसार मनुष्य के मन और शरीर में घनिष्ठ संबंध माना जाता है और कहा जाता है कि मन और शरीर एक दूसरे पर बड़ा असर डालते हैं, अर्थात् मन में जो विचार और भाव उठते हैं उनका शरीर के अंगों पर बड़ा प्रभाव पड़ता है और इसी प्रकार शरीर के संवेदनों का मन पर प्रभाव पड़ता है। यदि ये संवेदन इतने हलके हैं कि मनुष्य को उनका पता न चले तो भी मनाकाश पर उनके अंकन बन जाते हैं और फिर वे वहाँ से उठकर स्वप्न के रूप में प्रकट हो सकते हैं।

एक व्यक्ति ने अपना अत्यन्त मनोरंजक स्वप्न सुनाया। उसने कहा कि मैं कई दिन तक लगातार यह स्वप्न देखता रहा कि एक बिल्ली मेरे गले में चिपटकर उसे काटती है और भय के मारे मेरी आँख खुल जाती थी। इस स्वप्न का कारण कुछ

समझ में नहीं आता था और मैं बहुत चिन्तित रहा करता था। इसी बीच में मुझे जुकाम होगया और गले में खराश पैदा होगई। डाक्टर ने परीक्षा की तो मालूम हुआ कि गले में विकारी मांस बहुत बढ़ गया है और जल्दी ही आपरेशन होना चाहिए। इस दूषित मांस के निकल जाने के बाद वह स्वप्न आना बन्द होगया। उसने यह भी कहा कि इस दूषित मांस का मुझे कुछ ज्ञान न था और न मुझे इससे कुछ कष्ट ही होता था। मालूम हुआ कि उसके मनाकाश में इसके अंकन पड़ते रहते थे, जैसा कि इस स्वप्न से सिद्ध होजाता है।

डाक्टर कारनट का कथन है कि जीतने वाली फौज के सिपाहियों के घाव जल्द अच्छे हो जाते हैं। और हारी हुई फौज के सिपाहियों के घाव अच्छे होने में देर लाती है यह मनाकाश की करामात है। उसमें जो जीत के अंकन पड़े होते हैं वे शरीर की जीवनशक्ति को बढ़ा देते हैं, जिससे घावों के भरने में आसानी होजाती है। इसी प्रकार हार के अंकन जीवनशक्ति को कमकर देते हैं और घावों के भरने में देर लगती है और देर में स्वास्थ्य लाभ होता है। देखने में आता है कि दुःख क्रोध और भय की दशा में पाचन शक्ति बिगड़ जाती है। कोई हर्ष समाचार प्राप्त होने पर बीमार अच्छा होजाता है। कोई बुरी खबर पाने पर बीमारी बढ़ जाती है। अधिक भय के प्रभाव से बहुधा लोग मर भी जाते हैं। डाक्टर जान हंटर का कथन है कि मैं अपने शरीर के किसी भी भाग में चित्त एकाग्र करके उसमें

संवेदन उत्पन्न कर सकता हूँ।

इन उदाहरणों से सिद्ध होजाता है कि मन और शरीर में कैसा घनिष्ठ सम्बन्ध है। फिर देखा जाता है कि अगर कोई व्यक्ति दिल की धड़कन की बीमारी में अपना ध्यान बार बार हृदय की गति में एकाग्र करता रहता है, चाहे धड़कन उस समय बहुत हलकी हो हो, तो उसको दिल की बीमारी और बढ़ जाती है। यह दुष्परिणाम आत्म-संकेत का है। इस आत्म-संकेत में रोग का भय और उसकी चिंता के भाव सम्मिलित थे। यह हमारी देखी हुई बात है कि भय जब चरम सीमा को पहुँच जाता है तो उसमें एक विचित्र प्रकार का आकर्षण उत्पन्न होजाता है जिससे मनुष्य वही काम कर डालता है जिससे बचना चाहता है। एक कबूतर को देखा कि वह मकान की छत के पास रोशन-दान पर बैठा है, लेकिन ज्योंही बिल्ली हाल में घुसी और दोनों की आंखें चार हुईं, वह कबूतर बिल्ली की विपरीत दिशा में उड़ने के बदले करीब पचास फुट के फासले से उड़कर सीधा बिल्ली के मुँह में आगिरा। यह सब आत्म-संकेत का खेल है। इससे ज्ञात हुआ कि यदि हानिकर और रोगकर आत्मसंकेत से शरीर पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है तो लाभदायक और स्वास्थ्यकर आत्मसंकेत से स्वास्थ्य पर अच्छा प्रभाव पड़ना चाहिए। इस संकेत में जितना ही अधिक विश्वास और आशा के भाव सम्मिलित होंगे उतना ही शीघ्र मनाकाश की प्रतिक्रिया होने पर रोग दूर होजायगा।

मानसिक चिकित्सा का यह अभिप्राय नहीं है कि यदि दाँत खराब होगया हो तो उसे निकलवाया न जाय या शरीर का कोई अंग खराब होगया हो तो डाक्टर से उसका आपरेशन न कराया जाय। यह अवश्य है कि आत्म-संकेत की क्रिया से हर तरह का दर्द और उसके कारण पैदा होने वाली बेचैनी तुरन्त ही बिना औषधि के दूर की जासकती है। उदाहरण के लिए, यदि आपके सिर में बहुत दर्द होरहा है तो मन में इस विचार को पक्के तौर पर जमायें कि दर्द अवश्य दूर होजायगा। अपना ध्यान दर्द की ओर से हटाकर आँखें बन्द करलें और कुछ आवाज के साथ बार बार यह कहें कि दर्द जा रहा है, दर्द जा रहा है। यह वाक्य बराबर दोहराते जायं जब तक दर्द दूर न होजाय। परन्तु यह ध्यान रहे कि इस वाक्य को दोहराने में मन पर किसी प्रकार का जोर न पड़े। कष्ट जल्द ही दूर होने लगेगा और जब कम होजाय तो कहें—अब जा रहा है, अब जा रहा है। और फिर जोर से कहें—लो, अब चला गया। सबसे उपयोगी समय इस आत्मसंकेत की क्रिया के लिए सोकर उठते ही और रात को सोने से पहले का होता है। सुबह के समय की विशेषता यह होती है कि उस समय जाग्रत अवस्था के मन की चंचलता बहुत कम होती है और रात का समय इसलिए अच्छा होता है कि मन की चंचलता उस समय समाप्ति पर होती है और नींद आने वाली होती है।

जिन रोगों का मस्तिष्क या रग-मंडल से सम्बन्ध है, जैसे

पागलपन, लकवा, मिरगी, स्मरणशक्ति की कमजोरी आदि और इनके अतिरिक्त मानसिक खराबियों, जैसे भय, चिंता, आलस्य आदि, ये सब इस इलाज से आसानी से दूर किये जा सकते हैं।

भाड़-फूँक कोई जादू-टोना नहीं है बल्कि उसमें विश्वास पैदा करके आत्म-संकेत से ही काम लिया जाता है। एक मनो-वैज्ञानिक का कथन है कि अपने शरीर को नीरोग बनाने के सिलसिले में मुझे यह अनुभव हुआ कि शरीर के प्रत्येक अंग में अलग-अलग मन या आकाशतत्व है और वह मनाकाश के अधीन है। मैंने अपना ध्यान रोग-प्रस्त अंग पर जमा कर उसे ऐसे ही अपनी ओर प्रवृत्त कर लिया जैसे किसी बच्चे का ध्यान आकर्षित कर लिया करते हैं। फिर उस अंग के मन को यह समझा कर कि तेरे ठीक-ठीक क्रिया करने से सारे शरीर को आराम मिलेगा, उसे मैंने आज्ञा दी कि बीमारी दूर करके अपनी क्रिया ठीक-ठीक करे। मेरी अवस्था इस समय सत्तर वर्ष की है और मैं सदैव अपनी चिकित्सा इसी प्रकार कर लिया करता हूँ और इसी मानसिक संकेत के द्वारा मैं स्वास्थ्य का आनन्द भोगता हूँ। यह चाहे किसी को बच्चों की-सी बात मालूम हो, परन्तु जो सिद्धान्त के जानकार हैं और जिन्होंने अपने स्वास्थ्य को आत्मसंकेत के द्वारा ठीक किया है उनको इसकी सचाई पर विश्वास लाने में कोई कठिनता न होगी।

जब शरीर का कोई अङ्ग मसलन मेदा या गुर्दा बगैरह जरा तकलीफ देने लगता है तो आपको विश्वास हो जाता है कि उस

अङ्ग में कोई बड़ी खराबी पैदा हो गई है और आपके घर के लोग भिन्न, और पड़ोसी और हकीम-डाक्टर अपने अपने विचार प्रकट करके उस विश्वास को और पक्का कर देते हैं। नतीजा यह होता है कि प्रति-दिन आँख खुलते ही आप उस कष्ट की प्रतीक्षा करने लगते हैं और इस प्रकार रोग बढ़ता जाता है और अन्त में वह अङ्ग वास्तव में खराब हो जाता है। आपको यह ध्यान रखना चाहिए कि चेतनशक्ति जो शरीर को जान देती है और उसके प्रत्येक अङ्ग का संचालन करती है, न कभी बीमार होती है न बूढ़ी। जब कोई पेड़ सूख जाता है या काट डाला जाता है तो उसकी जड़ से दूसरा अङ्कुर फूट निकलता है। यह अङ्कुर भी वही पेड़ है जिसने दूसरा रूप धारण कर लिया है। ठीक इसी प्रकार यदि असावधानी से शरीर के किसी अङ्ग में कुछ खराबी आ जाती है तो चेतन-शक्ति स्वयं उसको ठीक करने का प्रयत्न कर देती है। जीवधारियों में देखा जाता है कि उनके शरीर में भी निश्चित समयों पर आवश्यक सुधार होता रहता है। साँप अपनी केंचुली उतार देता है। चिड़िया अपने बाल गिरा देती है और दूसरे जानवर अपने बदन के बाल झाड़ देते हैं। कुछ जानवरों में ऐसे परिवर्तन खास ऋतुओं में होते रहते हैं जिन्हें हम देख नहीं पाते। ऐसी ऋतु में चिड़ियों, पशुओं, मछलियों आदि में कुछ कमजोरी और सुस्ती आ जाती है क्योंकि प्रकृति ऐसे समय पर उन्हें आराम देना चाहती है। इसी प्रकार समय-समय पर मनुष्य पर भी यही दशा आती रहती है जब उसके कुछ अङ्ग ढीले और दुर्बल हो जाते हैं।

यह समय मनुष्य के लिए आराम करने का होता है जिससे चेतन शक्ति को, जो शरीर को चलाती है, दुर्बल अङ्गों को मम्हालने में तत्पर होने का पूरा अवसर मिल सके। प्रकृति यह चाहती है कि जब वह क्षति-पूर्ति का काम कर रही हो तो उस समय शरीर और मन दोनों को पूरा आराम दिया जाय। इसी प्रकार जब हम अनुभव करते हैं कि हम बूढ़े होने लगे तो वह भी हमारे शरीर में परिवर्तन का समय होता है। जो अंग अधिक उपयोग में आने के कारण कमजोर और ढीले पड़ गये हैं उनमें फिर से नवजीवन का संचार करने में चेतन शक्ति तत्पर होती है। इसलिए वह ऐसा समय होता है जब मनुष्य को अपने शरीर और मन को पूरा आराम देना चाहिए। लेकिन इसके विपरीत हम करते क्या हैं? इस नियम से अनभिज्ञ होने के कारण हम शरीर और मन से पूर्ववत् काम लेते रहते हैं और यह विश्वास कर लेते हैं कि यह कमजोरी और तकलीफ बुढ़ापे या बीमारी के कारण है और इस प्रकार व्यर्थ ही बूढ़े बन जाते हैं या बीमारी मोल ले लेते हैं। कुछ लोग यह कहेंगे कि अगर हम आराम करें तो हमारे बाल-बच्चों को खाने के लिए कहाँ से आये, रोज काम करते हैं तब मुश्किल से पेट भर पाता है। यह सच है और बड़े दुःख की बात है। लेकिन प्रकृति के नियम तो इन बातों का लिहाज नहीं करते। लाखों अभागे मनुष्य इस प्रकृति के नियम के विरुद्ध काम में पिले रहते हैं और बीमार पड़ जाते हैं और अन्त में दुःखी होकर जान दे देते हैं। कुछ अपनी आदत से

लाचार हैं, बिना काम किये उन्हें चैन नहीं पड़ता । ऐसे मनुष्यों को भी यही फल भोगना पड़ता है । चेतन शक्ति एक ही समय में दोनों काम नहीं कर सकती । जिस समय वह शरीर के सुधार में लगी होती है उस समय शरीर और मन को चलाने का काम नहीं कर सकती । अगर ऐसे अवसरों पर शरीर और मन को आराम देकर उसको आन्तरिक सुधार का अवकाश न देंगे तो आन्तरिक सुधार न होगा और परिणाम यह होगा कि बीमारी बढ़ती जायगी । प्रकृति केवल आराम माँगती है और आराम शरीर और मन दोनों के लिए; अर्थात् जहाँ तक सम्भव हो ऐसे अवसरों पर शरीर से कम से कम काम लिया जाय और मन को चिन्ता, व्याकुलता, क्रोध आदि से बचाये रक्खा जाय ।

वक्तृत्व-कला

वर्तमान शताब्दी में वक्तृत्वकला जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अत्यन्त आवश्यक है। जनता के सामने अपने विचारों और भावों को सबल और प्रभावशाली रूप में प्रकट करना प्रत्येक नेता के लिए अनिवार्य है, चाहे वह धार्मिक आचार्य हो चाहे राजनैतिक नेता, चाहे शासकवर्ग में हो चाहे शिक्षा-विभाग में हो चाहे व्यापारिक क्षेत्र में हो चाहे औद्योगिक में। इसलिए यदि इस पुस्तक में बताए हुए सिद्धान्तों से लाभ उठाकर आप किसी भी क्षेत्र में चोटी के नेता बनना चाहते हैं तो आपके लिए भी आवश्यक है कि वक्तृत्व कला में दक्षता प्राप्त करें। जिस प्रकार प्रत्येक प्रकार की सम्पत्ति की प्राप्ति के लिए बतलाया गया है कि पहले अपने मन में तेज चाह पैदा करें, इसी तरह इस हुनर के सीखने के लिए भी पहले तेज चाह होनी चाहिए तब दक्षता प्राप्त होसकती है। इसमें दक्षता प्राप्त करना कोई आसान काम नहीं है। मन में विचार करें कि इस महान कला में दक्ष होजाने पर आपको क्या क्या लाभ प्राप्त होजायेंगे ! आपको आत्म-विश्राम और अपने कारबार में लोगों के साथ बातचीत करके उन्हें स्वमतानुयायी बना लेने की योग्यता प्राप्त होजायगी। आप इसके द्वारा कितने मित्र बना लेंगे और कितनी

आपकी पहुँच होजायगी और दूसरों पर कितना प्रभाव डाल सकेंगे। इस कला के द्वारा आदमी बहुत शीघ्र ही अपने कार्य क्षेत्र में अगुआ बन सकता है और अपने में एक बड़ी शक्ति पैदा कर सकता है। अगर आपको इन सब बातों की कदर है तो अवश्य आपके हृदय में इस कला को प्राप्त करने की चाह उत्पन्न होनी चाहिए। एक प्रसिद्ध व्यक्ति का कथन है कि मैं धनी होने की अपेक्षा अच्छा वक्ता होना अधिक पसंद करता हूँ।

इस कला के सीखने में सबसे पहले जिस कठिनाई का सामना करना पड़ता है वह यह है कि आदमी बोलने के लिए खड़ा होने पर घबड़ा जाता है। उसके पैर कांपने लगते हैं चेहरा गर्म हो जाता है और जबान से बात नहीं निकलती। इस कठिनाई से निराश न होना चाहिए। हर किसी का प्रारम्भ में यही हाल हुआ करता है। जो लोग अन्त में बड़े वक्ता हुए उनको भी प्रारम्भ में इसी कठिनाई का सामना करना पड़ा था। क्या जान ब्राइट, क्या डिजरेली, क्या लायड जार्ज क्या लाजपतराय क्या सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, सब का यही अनुभव था। बहुतेरों को तो अभ्यस्त होजाने के बाद भी बहुत समय तक सभामञ्च पर खड़े होने पर थोड़ी सी झिझक मालूम होती है, मगर जहाँ पहला वाक्य मुँह से निकला, वह दूर होजाती है। इस झिझक का केवल एक ही इलाज है और वह यह कि जिस विषय पर आप बोलना चाहते हैं उसे अच्छी तरह तैयार कर लें। जब तक आप को तैयार पूरी नहीं है आपको कदापि अपने ऊपर भरोसा नहीं

होसकता और भरोसा न होने ही से भय और भिन्नक पैदा हुआ करती है। आपको मनोविज्ञान का यह नियम मालूम है कि मन के भावों और शरीर का घनिष्ठ सम्बन्ध है और इनका एक दूसरे पर प्रभाव पड़ता है।

जब हम प्रसन्न होते हैं तो हमारा मुँह ऊपर की ओर खिंच जाता है, आँखों के पास एक तरह की झुर्री पड़ जाती है और हमें मुस्कराहट आ जाती है। जब हम रंजीदा होते हैं तो हमारा मुँह नीचे की ओर खिंच जाता है और हमारे चेहरे से दुःख का भाव झलकने लगता है। क्रोध, भय, ईर्ष्या आदि सभी भाव चेहरे पर अपना प्रभाव डालते हैं। अभिनेताओं का अनुभव है कि जब वे क्रोध, दुःख या प्रसन्नता का भाव प्रकट करते हैं तो उलट कर ये भाव उनके मन में थोड़े बहुत उत्पन्न हो जाते हैं। मुस्कराने की आदत डालने से आपके मन में अपने आप प्रसन्नता का भाव पैदा हो जायगा। इसी प्रकार यदि क्रोध की सूरत बनाये रहेंगे तो क्रोध पैदा हो जायगा। भावना और भावना के प्रदर्शन में परस्पर इतना सम्बन्ध होने के कारण हम जिस भावना को चाहें, अपने मन में उत्पन्न कर सकते हैं और इसी प्रकार जिसको चाहें, अपने मन से निकाल दे सकते हैं। इस प्राकृतिक नियम को काम में लाकर अपने विचार सुगमतापूर्वक ठीक कर सकते हैं। नियम इसका यह है—अगर आप किसी भाव को बढ़ाना चाहते हैं तो इसको बार-बार प्रकट करने की आदत डालें और जिस भाव को अनुचित समझते हैं, जहाँ तक हो सके उसको

प्रकट न करें या जो भाव उसके विपरीत हो उसको प्रकट करने का अभ्यास करें। जिस भाव को उत्पन्न करना है उसका जा असर चेहरे आदि पर पड़ता है वैसा ही चेहरा बनाने की आदत डालने से वह भाव उत्पन्न हो जायगा। यदि क्रोध को प्रकट होने से रोक दें तो क्रोध अपने आप जाता रहता है। क्रोध आया हो तो दस तक गिनती गिन लें, क्रोध जाता रहेगा। जब मन में किसी प्रकार का भय या कायरता आ जाती है तो लोग अक्सर सीटी बजा कर उसको प्रकट होने से रोक देते हैं। यह एक साधारण अनुभव की बात है। दूसरा नियम यह है कि जो भाव आप पैदा करना चाहते हैं, उसकी मन में कल्पना किया करें। किसी भावना की कल्पना का भी वैसा ही संस्कार मनाकाश पर पड़ता है जैसा स्वयं उस भावना का पड़ा करता है। परिणाम यह होता है कि कल्पना करने से भी वह भावना उत्पन्न हो जाती है। यह कार्यवाही मानसिक संकेत की है।

इन नियमों से लाभ उठा कर आप जब बोलने खड़े हों तो आपका खड़े होने का ढङ्ग और आपकी बोली इस तरह की होनी चाहिए मानो आपको अपने ऊपर पूरा भरोसा है। इसका प्रभाव यह होगा कि आप में आत्म-विश्वास अपने आप उत्पन्न हो जायगा। यह भिन्नक अभ्यास से धीरे-धीरे दूर हो जाया करती है। लगातार अभ्यास से अनुभव प्राप्त होगा, अनुभव से आत्मविश्वास उत्पन्न हो जायगा और आत्मविश्वास आ जाने पर भिन्नक दूर हो जायगी। सब बड़े-बड़े वक्ताओं का यही

अनुभव है। आप भी ऐसा कर सकते हैं, यदि आपके हृदय में वक्ता बनने की चाह हो।

जिस विषय पर व्याख्यान देना है, उस कैसे तैयार किया जाय ? जो दिन आपके व्याख्यान के लिए निश्चित हो उससे काफी समय पहले उस पर विचार करना प्रारम्भ कर दें। उसके सम्बन्ध में पुस्तकें देखें और जो बातें आपके विषय पर प्रकाश डालती हों उनको छोट कर एक परचे पर लिखते जायें। इन दिनों में जो समाचार पत्र, पत्रिकाएँ आदि पढ़ें उनमें भी यही खोज करते रहें। यदि कोई व्यक्ति उस विषय का विशेषज्ञ मिले तो उससे उस विषय पर बातचीत करके जानकारी प्राप्त करें और उसे लिखते जायें। तात्पर्य यह कि बराबर उस विषय पर विचार जारी रहे। जब आपने निश्चय कर लिया कि आपको अपने भाषण में किस बात को सिद्ध करना है और आपका ध्यान उसको सिद्ध करने में पूर्णतया एकाग्र हुआ तो आप देखेंगे कि आकर्षण के नियम के अनुसार अपने विषय के सम्बन्ध में जो कुछ आप जानना चाहते हैं, आप से आप उसकी जानकारी के लिए सामान इकट्ठा होता जायगा। पुस्तकें और पत्रिकाएँ जो आप पढ़ेंगे उनको खोलते ही आपकी दृष्टि वहीं पड़ेगी जहाँ आपके मतलब की बात लिखी है। इन द्वारों से या तो आपको अपने मतलब की बातें मालूम हो जायँगी या यह पता लग जायगा कि वे कहाँ से मालूम हो सकती हैं। मतलब यह कि हर तरह से आपको अपने मतलब के सम्बन्ध में बातें सूझने लगेंगी

और वक्तृता का क्रम तैयार होने लगेगा। मन में सच्ची लगन जिस बात की होती है उसकी पूर्ति के सारे सामान प्रकृति के नियम सहज ही जुटा देते हैं।

जब व्याख्यान देने के चार-पाँच दिन शेष रह जायें तब इन सब नोटों को सामने रखकर उनकी छाँट करें। जो बातें इतने समय विचार करने के बाद अनावश्यक जान पड़ें उनको निकाल दें और शेष बातों को और विचारों को जो लिखे हुए हों और जो अपनी बुद्धि और अनुभव से निकाले हों, उन सबको उचित क्रम दें और उसको कई विभागों में बाँटें। जिस विभाग को हाथ में लिया जाय उसके सम्बन्ध में जो कुछ भी करना है सब उसी विभाग में आ जाना चाहिए। ऐसा न हो कि अधूरी बात इस हिस्से के सम्बन्ध में लिखी जाय और अगर कोई बात बाद को याद आये तो वह किसी दूसरे हिस्से में डाल दी जाय। जो बातें लिखी जायँ, खूब जाँच कर लिखी जायँ जिससे उनमें कोई गलती न होने पाये।

फिर व्याख्यान का प्राक्थन और उपसंहार तैयार किया जाय। प्राक्थन में ऐसी बात लानी चाहिए जिनसे श्रोताओं का ध्यान और उनकी रुचि आपकी ओर आकृष्ट हो जाय। यह तब सम्भव है जब आप प्राक्थन में यह दिखलायें कि जिस विषय पर आप बोलेंगे, वह श्रोतागण के बड़े मतलब का है। उपसंहार का मतलब यह है कि व्याख्यान का जो तात्पर्य है वह श्रोतागण के मन में बैठ जाय या जो काम आप उनसे कराना

चाहते हैं उसके लिए वे तैयार हो जायँ । प्राक्कथन और उपसंहार दोनों व्याख्यान के अत्यन्त महत्वपूर्ण अङ्ग हुआ करते हैं, इसलिए उनको बहुत परिश्रम के साथ तैयार करना चाहिए ।

क्या व्याख्यान तैयार हो जाने पर उसे श्रोताओं के सामने पढ़ कर सुनाया जाय ? जहाँ तक हो सके ऐसा न करना चाहिए । श्रोताओं का ध्यान आकृष्ट करने के लिए यह आवश्यक है कि आपकी आँखें उनकी ओर हों न कि भाषण को पढ़ने में लगी हों । भाषण का पूरा प्रभाव तब श्रोताओं पर पड़ेगा जब आप उनको सम्बोधित करके उनसे बात करेंगे । कागज हाथ में रख कर पढ़ने से यह बात प्राप्त नहीं हो सकती । जब आप इस कला को सीख रहे हों, आपको चाहिए कि व्याख्यान को कण्ठस्थ कर लें, बल्कि उसको किसी बड़े दर्पण के सामने खड़े हो कर एक-दो बार दोहरा भी लें और तब श्रोताओं के सामने खड़े हो कर व्याख्यान दें । जब इस प्रकार आपको भाषण देने का कुछ अभ्यास हो जायगा तब केवल प्राक्कथन और उपसंहार को याद कर लेना और व्याख्यान के विषय की सुर्खियाँ एक कागज पर लिख कर अपने पास रखना काफी होगा । अगर व्याख्यान देते समय कहीं अटक जायँ तो एक सेकिण्ड के लिए सुर्खियों पर नज़र डाल कर अपनी याद ताजा कर सकते हैं । आगे चल कर इसकी भी आवश्यकता नहीं रह जायगी । सब बड़े और प्रसिद्ध वक्ताओं ने प्रारम्भ में यही किया ।

जब व्याख्यान देने के लिए खड़े हों, उस समय आपको अपने व्याख्यान के विषय पर पूरा अधिकार होना चाहिए और ऐसा

प्रकट होना चाहिए कि आप अपने सिद्धान्त की सचाई में पूरा विश्वास रखते हैं और आपका दिल जोश से भरा हुआ है। आपके दिल का जोश श्रोताओं के दिलों में भी जोश पैदा कर देगा। अगर आपको श्रोताओं के साथ सच्ची सहानुभूति है और आपको अपने सिद्धान्त पर पूरा विश्वास है तो स्वभावतया आपके हृदय में जोश पैदा होगा कि उस सिद्धान्त को श्रोताओं के मन पर अंकित करें। व्याख्यान ऐसी आवाज़ से देना चाहिए कि सब लोग आसानी से सुन सकें। अगर कमरा बड़ा है और श्रोतागण अधिक हैं तो आवाज़ ऊँची होनी चाहिए। छोटे कमरे में या थोड़े श्रोताओं के सामने ज्यादा जोर से बोलना आवश्यक नहीं। व्याख्यान देते समय मामूली बात-चीत का ढङ्ग ग्रहण किया जाय। सभामञ्च पर खड़े हो कर अधिक हाथ-पैर हिलाना शोभा नहीं देता। इस प्रकार बोला जाय मानो आप अपने किसी मित्र से एकान्त में कुछ कह रहे हों और उसे जोश के साथ, युक्तियों से समझा कर अपने विचारों से सहमत बना रहे हों। अगर आप वास्तव में कोई सिद्धान्त श्रोतागण के सामने प्रस्तुत कर रहे हैं और आपको उसकी सचाई में पूरा विश्वास है और आपने अपने व्याख्यान को परिश्रम पूर्वक तैयार करके अपने में आत्म-विश्वास उत्पन्न कर लिया है और आपके दिल में यह निश्चय पक्का है कि अपने भाषण में अवश्य सफल होंगे तो इन बातों के आपके मनाकाश पर पड़े हुए अकून अवश्य उलट कर आपके चित्त पर प्रभाव डालेंगे और आपकी इच्छानुसार सफलता अवश्य प्राप्त होगी।

शिक्षण

नवीन मनोविज्ञान के सिद्धान्तों का शिक्षा-प्रणाली पर बड़ा असर पड़ा। प्राचीन काल से शिक्षक-गण इस सिद्धान्त को मानते आते थे कि बच्चे को दण्ड न दिया जाय तो वह बिगड़ जायगा। यद्यपि ५०-६० वर्ष से इस सिद्धान्त का विरोध किया जा रहा है और बहुत सी नई शिक्षा-प्रणालियाँ जारी हो गई हैं जिनमें बच्चों के साथ कठोरता का व्यवहार करना या उन पर बहुत दबाव डालना निषिद्ध समझा जा रहा है, परन्तु फिर भी जैसा चाहिए उनको अपनी प्रकृति के अनुसार आत्म-विकास का अवसर नहीं दिया जाता है। घर में माता-पिता उनको दबाते रहते हैं, स्कूल में मास्टर उनको अपने बनाये हुए नियमों पर चलाना चाहते हैं और समाज उन पर अपने नियमों का बन्धन लगाता है। शिक्षक चाहता है कि जो वह कहे बच्चा सुने और जो वह चाहता है वही बच्चा करे, जैसा वह बतलाये उसी को ठीक माने। माता-पिता अपनी इच्छा पर उसको चलाना चाहते हैं। तात्पर्य यह कि बेचारा बच्चा हर तरफ से जंजीरों में जकड़ा रहता है। अपनी प्रकृति के अनुसार बरतने की उसे तनिक भी स्वतन्त्रता नहीं है। परिणाम यह है कि उसकी मानसिक, आचारिक शक्तियाँ जगने ही नहीं पाती और वह स्वयं विचार करने के अयोग्य हो जाता है।

अगर कोई लाभ पिछले योरोपीय युद्ध से हुआ था तो वह यह हुआ था कि विद्वानों का ध्यान बच्चों की शिक्षा-प्रणाली की ओर आकर्षित होगया था और उनको इसमें त्रुटियाँ दीखने लगीं थीं। उनको विश्वास होगया था कि इस विपत्ति का कारण विशेषकर शिक्षण की गलत प्रणाली ही है। नये प्रकार की बहुत सी पाठशालाएं ब्रिटेन, जर्मनी और अमरीका में खुल गई थीं और वहाँ बच्चों को बहुत से अनावश्यक बंधनों से मुक्त करके उनको अपने ढंग पर आत्म-विकास का पूरा अवसर दिया गया था। नवीन मनोविज्ञान के सिद्धान्तों के अनुसार वहाँ शिक्षा की ऐसी प्रणाली बनाई गई थी जिसमें बच्चों की सहज-वृत्ति को दबाने के बदले उसे स्वतंत्रतापूर्वक अच्छी तरह प्रकट करने का अवसर दिया जाने लगा था।

नवीन मनोविज्ञान ने बतलाया कि इस जाग्रत अवस्था के मन के अतिरिक्त मानसिक क्रियाओं का एक और बड़ा भारी क्षेत्र है जिसे मनाकाश कहते हैं। बच्चे की प्रकृति और स्वभाव की उत्पत्ति वहीं से होती है। जाग्रत अवस्था के मन का क्षेत्र मनाकाश के क्षेत्र की अपेक्षा बहुत छोटा है। इसलिए यदि आप अपनी शिक्षा प्रणाली में मनाकाश का विचार नहीं रखते तो आप पूरे बच्चे की शिक्षा नहीं देने बल्कि उसके एक थोड़े से अंश को ही देते हैं। बच्चे के चालचलन पर मनाकाश का अधिक प्रभाव पड़ता है, जाग्रत अवस्था की मानसिक क्रियाओं का अपेक्षाकृत बहुत ही कम। जो संस्कार, प्रिय या अप्रिय, पुराने

या नये, मनाकाश में पड़े होते हैं वे ही बरुचे की प्रकृति बनाते हैं। जो अप्रिय अनुभव बच्चे को होता है उसे वह भूलता नहीं है, केवल उसके जाग्रत अवस्था के मन को उसका ज्ञान नहीं रहता। मगर मनाकाश में जाकर उसके संस्कार पड़ जाते हैं और फिर उलट कर वे बच्चे की सहजवृत्ति के रूप में प्रकट होते हैं।
